2022 | अंक 28

अश्मिका

राजभाषा कार्यान्वयन समिति द्वारा प्रसारित पत्रिका

वाडिया हिमालय भूविज्ञान संस्थान
देहरादून-248001

2022 | अंक 28

अश्मिका

राजभाषा कार्यान्वयन समिति द्वारा प्रसारित पत्रिका

संपादक :
डॉ. गौतम रावत

सहायक संपादक :
डॉ. छवि पंत पांडेय

प्रकाशन प्रबंधन :
श्री ज्ञान प्रकाश

प्रकाशक :
राजभाषा कार्यान्वयन समिति
वाडिया हिमालय भूविज्ञान संस्थान
देहरादून–248001

आवरण चित्र :
बोडिनेज संरचना

छायाकार :
मोहम्मद शावेज

पृष्ठ आवरण छायाकार :
अंजली

प्रत्याख्यान : पत्रिका में प्रस्तुत विचार लेखकों के अपने मूल विचार हैं।
संपादक मंडल / विभाग / प्रकाशक का उनसे सहमत होना आवश्यक नहीं है।

विषय-सूची

क्र.सं.	विषय	लेखक	पृष्ठ सं.
	निदेशक की लेखनी से		
	सम्पादकीय		
1.	भू–धरोहर और वाराणसी के आसपास के क्षेत्र	मीनल मिश्रा	1
2.	जलवायु इंजीनियरिंग	सुरभि	5
3.	हिमानी या हिमनदी की झील और उसके प्रभाव	रोहित कुमार एवं वेदिका पंत	8
4.	पृथ्वी के दक्षिणी ध्रुव पर मनुष्यों के प्रथम चरण	रमेश चन्द्र	11
5.	द्रव समावेश: एक आत्मकथा	वरुण कुमार मुखर्जी	13
6.	भारतीय ग्रीष्मकालीन मानसून	अमरजीत विद्यार्थी	15
7.	अक्षय ऊर्जा विश्व एवं भारत के परिप्रेक्ष्य में	प्रवीण कुमार	17
8.	पृथ्वी की उत्पत्ति और वर्तमान समस्या	संजय गोस्वामी	20
9.	अनुसंधान को समर्पित एक जीवन– डॉ. बिभा चौधरी	सुमन रैना	23
10.	उत्तराखंड में बढ़ता मानव वन्य जीव संघर्ष: एक चुनौती	आशीष कुमार आर्य एवं डॉ. अर्चना बचेती	27
11.	इतिहास : एक सेतु	शुभ्रा बैनर्जी	30
12.	राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020: भारतीय शिक्षा का नया दौर	मेघा जुयाल	32
13.	विज्ञान के क्षेत्र में हिन्दी भाषा का प्रयोग: चुनौतियां तथा संभावनाएं	स्वाति चढ्ढा	35
14.	समकालीन भारतीय साहित्य में अनुवाद की भूमिका	यशपाल सिंह बिष्ट	39
15.	विज्ञान के प्रचार – प्रसार से जुड़े कुछ बुनियादी सवाल	सुभाष चंद्र लखेड़ा	42
16.	आत्मनिर्भर भारत की दिशा में हिंदी का योगदान	कल्पना चंदेल	45
17.	आधुनिक परिदृश्य में संबोधन सूचकों की प्रासंगिकता	यशपाल सिंह बिष्ट	47
18.	अष्टांग योग	आचार्य प्रेम प्रभु	49
19.	ज्योतिषशास्त्र: मेरा अनुभव	छवि पन्त	51
20.	प्रकृति का स्वर्ग चकराता: एक शांत एवं आत्मचिंतन स्थल	गोपाल वैदैस्वरन	55
21.	ताड़केश्वर शिव धाम चलें इस बार	एन.के. जुयाल	58
22.	रेशमा	सुवर्णा कुलकर्णी	60
23.	ऐसे शिक्षक हो मेरे	अमरजीत विद्यार्थी	64
24.	भारत देश महान	संगीता चमोली	65
25.	विकास नाम पर विस्फोट जो होते	मंजू मल्होत्रा फूल	66
26.	संस्थान समाचार		67

निदेशक की लेखनी से...

संस्थान की राजभाषा क्रियान्वयन समिति के तत्वाधान में संस्थान की गृह पत्रिका "**अश्मिका**" का अठ्ठाइसवाँ अंक इस वर्ष प्रकाशित हो रहा है। प्रकाशन का यह वर्ष महत्वपूर्ण है क्योंकि इस वर्ष हमने अपनी स्वतंत्रता के 75 वर्ष पूरे किये हैं और अपनी स्वतंत्रता के 76 वें वर्ष में कदम रख रहे हैं ।

स्वतंत्र भारत की 75 वर्षों की यात्रा में हमने विभिन्न स्तरों पर कई लक्ष्य प्राप्त किये हैं और कई लक्ष्यों की प्राप्ति के लिये यह यात्रा जारी है । प्रान्तीय विविधता को बनाये रखते हुये, आपसी सामंजस्य को प्रखर करने की यात्रा के क्रम में एक भारत, श्रेष्ठ भारत का जो स्वप्न हमने देखा है उसकी एक अहम कड़ी राजभाषा है। राजभाषा की अवधारणा एकात्मकता को संवर्धित करने के प्रयास का ही परिणाम है। सभी केन्द्रीय विभागों के कामकाज की भाषा राजभाषा हिन्दी हो तो इसका सहज व सीधा लाभ आम जनमानस को है । हम सभी का दायित्व है कि हम अपने अपने कार्यक्षेत्रों में अपने दैनिक कार्यों में राजभाषा का अधिकाधिक प्रयोग करें। संस्थान की गृह पत्रिका "**अश्मिका**" के द्वारा हमारा यही प्रयास है।

अश्मिका अपने अभिनव प्रयोगों के साथ राजभाषा के लक्ष्यों की प्राप्ति के पथ पर सदैव अग्रसर रहे। "अश्मिका" के लिये मेरी कोटि कोटि शुभकामनायें।

डॉ. कालाचाँद साँई
निदेशक

सम्पादकीय...

इस वर्ष हम आजादी का अमृत महोत्सव मना रहे है। सम्पूर्ण राष्ट्र स्वतंत्रता संग्राम के सेनानियों की बलिदानी गाथाओं को स्मरण कर नतमस्तक है, राष्ट्र के प्रति संकल्पित है। इस अवसर पर संस्थान की राजभाषा कार्यान्वयन समिति की वार्षिक पत्रिका 'अश्मिका' का अठ्ठाइसवां अंक आपके सामने रखते हुये हर्ष ,उल्लास की अनुभूति होती है। राजभाषा की विकास यात्रा में यह संक्षिप्त भागीदारी गौरव का अनुभव कराती है। यह विकास यात्रा यों तो स्वतंत्रता से पूर्व कई दशकों से जनभाषा के रुप में प्रारम्भ हो गयी थी परन्तु इसको संविधान की शक्तियां स्वतंत्रता के उपरान्त ही मिली है। भारत जैसे विविध भाषाओं के देश में भारत सरकार के सभी कार्यालयों को संवाद के लिये एक भाषा चाहिये ही और वह अपने देश में बोले जाने वाली ही होनी चाहियें कोई विदेशी भाषा नही। विभिन्न स्वतंत्रता सेनानियों ने स्वतंत्रता संग्राम के समय ही विभिन्न अवसरों पर इसके लिये हिन्दी को ही उपयुक्त माना है। स्वतंत्रता उपरान्त अधिकांश प्रबुद्ध व्यक्तियों की भी यही धारणा रही है। हमारी नयी राष्ट्रीय शिक्षा नीति भी इसी अवधारणा को मजबूत करती है। राष्ट्रीय शिक्षा नीति मातृभाषा में शिक्षा को प्रोत्साहित करती है। यह न केवल प्राथमिक शिक्षा बल्कि उच्च शिक्षा में भी मातृभाषा का समर्थन करती है। यहाँ पर विज्ञान, कला, प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में कार्यरत सभी विज्ञ जनों का यह पुनीत कर्तव्य है कि अपनी विशेषज्ञता अनुसार विभिन्न विषयों पर अपनी मातृभाषा में पुस्तकों का सृजन करें ताकि स्कूल, कॉलेजों, विश्वविद्यालयों के छात्रों को विकल्प उपलब्ध रहें। यह प्रयास भाषा को भी समृद्ध करेगा। हम अपनी मातृभाषा में आधुनिक प्रगति से संबधित हर विषय के लिये शब्द रचना कर पांयेगे।

अश्मिका का यह अंक एक बार फिर अपने संक्षिप्त प्रयासों के साथ रोचक व उपयोगी विषयों पर सरल लेखों के साथ उपस्थित है। यह अंक कैसा लगा ? इस विषय पर अपने विचारों से अवश्य अवगत करायें। ashmika@wihg.res.in

भू–धरोहर और वाराणसी के आसपास के क्षेत्र

मीनल मिश्रा
विज्ञान विद्यापीठ, इग्नू मुख्यालय, नई दिल्ली

वाराणसी, जिसे काशी या बनारस के नाम से भी जाना जाता है, गंगा नदी के पश्चिमी तट पर बसा एक प्राचीन पौराणिक शहर है। किंवदंती के अनुसार, इसकी स्थापना 5,000 वर्ष पहले भगवान शिवजी ने की थी, हालांकि आधुनिक विद्वानों का मानना है कि यह लगभग 3,000 वर्ष पुराना शहर है। वाराणसी एक महत्वपूर्ण औद्योगिक केंद्र के रूप में विकसित हुआ जो अपने मलमल और रेशमी कपड़े, इत्र, हाथी दांत के काम और मूर्तिकला के लिए प्रसिद्ध था। माना जाता है कि भगवान बुद्ध ने वाराणसी के पास सारनाथ में अपना पहला धर्मोपदेश दिया था, जब उन्होंने 528 ईसा पूर्व के आसपास बौद्ध धर्म की स्थापना की थी। 8वीं शताब्दी में शहर का धार्मिक महत्व बढ़ता रहा, जब आदि शंकराचार्य ने वाराणसी के एक आधिकारिक संप्रदाय के रूप में भगवान शिव की पूजा की स्थापना की थी। मध्य युग में मुगल शासन के दौरान, वाराणसी शहर हिंदू भक्ति, तीर्थयात्रा, रहस्यवाद और कविता का एक महत्वपूर्ण आध्यात्मिक केंद्र के रूप में जाना जाता था, जिसने सांस्कृतिक महत्व और धार्मिक शिक्षा के केंद्र के रूप में अपनी प्रतिष्ठा में योगदान दिया। तुलसीदास जी ने भगवान राम के जीवन पर अपनी महाकाव्य कविता रामचरितमानस की रचना वाराणसी में की थी। भक्ति आंदोलन के कई अन्य प्रमुख सन्त जैसे कबीर और रविदास का जन्म वाराणसी में हुआ था। अतः वाराणसी प्राचीन काल से ही शिक्षा और सभ्यता का केंद्र रहा है तथा इसे दुनिया के सबसे पुराने जीवित शहरों में से एक माना जाता है। मार्क ट्वेन ने अंग्रेजी में लिखा है कि 'बनारस इतिहास से भी पुराना है, परंपरा से भी पुराना है, किंवदंती से भी पुराना है, और इन सभी को मिलाकर देखने से दोगुना पुराना लगता है'।

वाराणसी तथा उसके आसपास के जिले जैसे मिर्जापुर और सोनभद्र में कई ऐतिहासिक स्मारक, मंदिर और किले हैं, जो कि विंध्यन पहाड़ी के बलुआ पत्थरों/बालुकाश्म (सैंडस्टोन) से निर्मित हैं। स्पष्ट रूप से किसी भी क्षेत्र या स्थान के भूविज्ञान का वहाँ की इमारतों में उपयोग की गयी निर्माण सामग्री की निकटता और उपलब्धता पर गहरा प्रभाव पड़ता है। हमारी शोध टीम ने पूर्वी सोन घाटी में विंध्यन पहाड़ी के बलुआ पत्थरों का अध्ययन करने के लिए उत्तर प्रदेश के वाराणसी, मिर्जापुर और सोनभद्र जिलों में विस्तृत भूवैज्ञानिक शोधकार्य किया। उत्तर प्रदेश तथा मध्य भारत में विंध्याचल पर्वतमाला के बलुआ पत्थरों ने कई स्थानों पर प्राचीन इमारतों के लिए सामग्री प्रदान की है। विंध्यन पहाड़ी के बलुआ पत्थरों का उपयोग बड़े पैमाने पर स्थानीय उद्देश्यों जैसे कि सड़क निर्माण के लिए भी किया जाता है। इस लेख में हम वाराणसी तथा उसके आसपास के जिले जैसे मिर्जापुर और सोनभद्र के ऐतिहासिक स्मारकों में उपयोग किये गये विंध्यन पहाड़ी के बलुआ पत्थरों के भूवैज्ञानिक दृष्टिकोण पर प्रकाश डालेंगे और भू–धरोहर पत्थरों के रूप में उनकी चर्चा करेंगे। विंध्यन पहाड़ी के बलुआ पत्थर भारत के प्रायद्वीपीय भाग, विशेष रूप से उत्तर प्रदेश के दक्षिणी भाग में पाया जाता है। ये भारत के स्तरक्रम विज्ञान में विंध्यन अधिसंघ शैल समूह के रूप में जाना जाता है। स्तरक्रम विज्ञान भूविज्ञान की वह शाखा है जिसके अंतर्गत शैल परतों, उनके अनुक्रम और परस्पर संबंधों का अध्ययन किया जाता है। स्तरक्रम विज्ञान में भूवैज्ञानिक परिघटनाओं की व्याख्या करने वाले सिद्धांत होते हैं, इसे ऐतिहासिक भूविज्ञान के नाम से भी जाना जाता है। आपकी जानकारी के लिए, इन शैल अनुक्रमों

का नामकरण अक्सर उस स्थान के नाम पर किया जाता है जहाँ पर यह उत्कृष्ट प्रकार से अनावृत हैं।

विंध्यन अनुक्रम अधिसंघ को 4 शैल समूहों में विभाजित किया गया है, ये – सेमरी, कैमूर, रीवा और भांडेर हैं और कालानुक्रमिक अनुक्रम (अधिक से कम आयु) में व्यवस्थित हैं। सेमरी समूह को निचले विंध्यन के रूप में भी जाना जाता है जबकि कैमूर, रीवा और भांडेर ऊपरी विंध्यन का गठन करते हैं। पूर्वी सोन घाटी क्षेत्र में सेमरी और कैमूर समूह के शैलों के दृश्यांश दिखायी देते हैं। हम मुख्य रूप से, इस लेख में कैमूर शैल समूह जो कि बलुआ पत्थर का अनुक्रम है, के विषय में चर्चा करेगें। इस समूह की मोटाई लगभग 400 मीटर है। कैमूर समूह का बलुआ पत्थर वाराणसी, मिर्जापुर और सोनभद्र जिलों में श्रेष्ठ दृश्यांश को प्रदर्शित करते हैं। प्राचीन काल से इन बलुआ पत्थरों को उत्कृष्ट इमारती पत्थरों के रूप में उपयोग किया गया है। कैमूर समूह के शैलों को 6 उपसमूहों में विभाजित किया गया है; सासाराम बालुकाश्म, घुरमा बालुकाश्म, मारकुंडी बालुकाश्म, बिजयगढ़ शेल, मंगेसर बालुकाश्म और धंड्रौल बालुकाश्म। सासाराम बालुकाश्म की मोटाई 40 मीटर है। यह सफेद से गंदले सफेद, मोटे संस्तर तथा बडे कणों से गठित है। सासाराम बालुकाश्म प्रकृति में मोटे कण और सिलिका युक्त सीमेंट वाला होता है। मोटे कण के परिणामस्वरूप इसमें बारीक दरारें बन सकती हैं और अपक्षय प्रक्रिया शुरू हो सकती है। इस प्रकार का गठन इसे बहुत ही भुरभुरा और स्मारकों के निर्माण के लिए अनुपयुक्त बनाता है। घुरमा बालुकाश्म (मोटाई 15 मीटर) भूरे रंग का, पतले संस्तरों वाला मध्यम से महीन कणों वाले शैल हैं। इस अनुक्रम में अगला उपसमूह मारकुंडी बालुकाश्म, जिसकी मोटाई 40 मीटर है। यह भूरे और लाल रंग के बालुकाश्म तथा मोटे से महीन कणों से निर्मित है। घुरमा और मारकुंडी उपसमूहों के बलुआ पत्थरों में अभ्रक और मृत्तिका जैसे खनिजों के कणों की उपस्थिति के कारण ये काफी अपरिपक्व हैं। ये खनिज अपक्षय के लिए काफी प्रवण हैं। अतः निर्माण गतिविधिओं में इनका उपयोग नहीं होता है। बिजयगढ़ शैल के कणों के आकार बालुकाश्म से बहुत भिन्न हैं, जो महीन रेत, मृत्तिका, गाद से लेकर मिट्टी तक के अवयवों से निर्मित होता है। मंगेसर बालुकाश्म समूह में लाल से हल्के गुलाबी तथा मध्यम कण (चित्र 1) वाले बालुकाश्म हैं। ये विभिन्न रंगों जैसे कि गुलाबी, हल्के हरे और हल्के पीले आदि में भी पाये जाते हैं। मंगेसर बालुकाश्म (लगभग 130 मीटर) कैमूर समूह की सभी आश्मिकाओं में सबसे मोटा है और अपने आकर्षक रंगों, कणों के आकार और बनावट के कारण एक आदर्श निर्माण सामग्री के रूप में प्रयोग होता है। विविध रंग उसमें मौजूद फेरोजिनस (लौहमय) सीमेंट के कारण होता है, जो कि ध्रुवण सुक्ष्मदर्शी में शैल की पतली काट के अध्ययन से पता चलता है। मंगेसर के मध्यम मोटाई के संस्तरों वाले बलुआ पत्थर को आसानी से स्लैब में ढाला जा सकता है जिससे निर्माण कार्य में उनके उपयोग की सुविधा मिलती है। यह बलुआ पत्थर मिर्जापुर और सोनभद्र जिलों से लाया गया था और इसका उपयोग वाराणसी और उसके आसपास की ऐतिहासिक इमारतों और स्मारकों में किया गया। मंगेसर बालुकाश्म के ऊपर धंड्रौल बालुकाश्म (मोटाई 15 मीटर) पाया जाता है। यह महीन कण से मोटे कणों तथा गंदले सफेद से लेकर शुद्ध सफेद रंग वाला सघन और कठोर बालुकाश्म (चित्र 1) है। इसमें मुख्य रूप से क्वाट्र्ज कण और सिलिकामय (सिलिका युक्त) सीमेंट पायी जाती है, जो इन्हें ऐतिहासिक इमारतों के निर्माण के लिए उपयुक्त बनाती है। हाँलाकि ऐतिहासिक इमारतों में धंड्रौल बालुकाश्म के गठन के कारण उसका उपयोग मंगेसर बालुकाश्म से अपेक्षाकृत कम हुआ है।

उपरोक्त विवरण से स्पष्ट होता है कि कैमूर समूह के उपसमूह मंगेसर बालुकाश्म के लाल से हल्के गुलाबी बलुआ पत्थरों का उपयोग पौराणिक काल से निर्माण उद्देश्यों के लिए किया जाता रहा है। इसका मुख्य कारण उनके अद्भुत रंग, सुंदरता, कण साइज़ नक्क़ाशी (या मूर्तिकला) करने में आसानी, स्थायित्व और अपक्षय के प्रतिरोधता के रूप में जाना जाता है। उत्तम

अभियांत्रिकी और भौतिक गुण, कठोरता और सघनता के साथ मध्यम से महीन कण तथा विविध रंग इन बलुआ पत्थरों को निर्माण सामग्री के लिए बहुत उपयुक्त बनाते हैं। भारत का राजचिह्न सारनाथ स्थित अशोक के सिंह स्तंभ की अनुकृति है, जो सारनाथ के संग्रहालय में सुरक्षित है। मूल स्तंभ में शीर्ष पर चार सिंह हैं, जो एक–दूसरे की ओर पीठ किए हुए हैं। इसके नीचे घंटे के आकार के पदम के ऊपर एक चित्र वल्लरी में एक हाथी, चौकड़ी भरता हुआ एक घोड़ा, एक सांड तथा एक सिंह की उभरी हुई मूर्तियां हैं, इसके बीच–बीच में चक्र बने हुए हैं। एक ही पत्थर को काट कर बनाए गए इस सिंह स्तंभ के ऊपर 'धर्मचक्र' रखा हुआ है। यह भारत का राष्ट्रीय प्रतीक है तथा, इसे मंगेसर बलुआ पत्थर से तराशा गया था। ऐतिहासिक किले जैसे चुनार किला (1029 ई.) और रामनगर किला (1750 ई.) मंगेसर उपसमूह के बलुआ पत्थर से निर्मित हैं। नौगढ़ किला को अब नैनागढ़ का किला कहा जाता है। बिजयगढ़ किला (1040 ई) और अगोरी किला (बारहवीं शताब्दी) धंड्रौल बालुकाश्म से निर्मित हैं। प्राचीन मंदिरों में मिरज़ापुर स्थित विंध्यवासिनी देवी, दुर्गा देवी, अष्टभुजा और शीतला माता के साथ वाराणसी में बाबा विश्वनाथ, दुर्गा कुंड मंदिर हल्के गुलाबी रंग के मंगेसर के बलुआ पत्थर से निर्मित हैं। सोनभद्र जिले में सोमनाथ मंदिर (चोपन) और रेणुकेश्वर सोमनाथ मंदिर (रेणुकूट) भी हल्के गुलाबी बालुकाश्म से बना है। वाराणसी स्थित संपूर्णानानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय मंगेसर बालुकाश्म से निर्मित स्मारक का उत्कृष्ट नमूना है। सारनाथ में विभिन्न भव्य बौद्ध स्मारकों, अशोक स्तंभ, स्तूपों और थाई एवं वियतनामी मंदिर (जिसमें बुद्ध की 70 फीट) की बैठी मूर्ति के निर्माण में भी गुलाबी रंग के मंगेसर के बलुआ पत्थर उपयोग किया गया है। घाटों के किनारे स्थित मंदिर, पंचक्रोशी/पंचकोशी यात्रा पथ (लम्बाई 80 कि.मी.) पर स्थित एक सौ आठ मंदिर में से अधिकतर मंदिर मंगेसर बलुआ पत्थर से निर्मित हैं। वाराणसी में गंगा किनारे 88 घाट हैं जिनमें से पुराने घाट जैसे दशाश्वमेध, अस्सी, हरिश्चंद्र, चेत सिंह, मानसरोवर, भोंसले, गंगा महल, मानमंदिर, केदार और मणिकर्णिका मंगेसर के बलुआ पत्थर से निर्मित हैं। वाराणसी के अधिकांश घाटों का पुनर्निर्माण 1700 ईसवी के बाद किया गया था, जब यह शहर मराठा साम्राज्य का हिस्सा था। मीरज़ापुर में गंगा के किनारे भव्य घाट जैसे पक्का घाट, बदली घाट और बरिया घाट कैमूर समूह के मंगेसर बलुआ पत्थर से निर्मित हैं। बारीक नक्काशी के साथ एक शानदार संरचना पक्का घाट के बलुआ पत्थर में पायी जाती है। यह घाट अपने आप में बहुत ही दर्शनीय है और यहां स्थित मंदिर पूरे क्षेत्र में एक रहस्यवादी गुण जोड़ता है। 18वीं सदी में मिर्जापुर के पुराने चुंगी पुल के निर्माण में मंगेसर बलुआ पत्थर का उपयोग किया गया था।

बलुआ पत्थर की इस गुणवत्ता का उपयोग समकालीन इमारतों जैसे काशी विश्वनाथ कोरिडॉर, अयोध्या में राम मन्दिर और राम सर्किट, प्रस्तावित विंध्यवासिनी– अष्टभुजा– विष्णु– कोरिडॉर, लखनऊ में डॉ. भीम राव अम्बेडकर सामाजिक परिवर्तन स्थल और नोएडा में गौतम बुद्ध स्मारक पार्क जैसी परियोजनाओं में भी किया गया है। इन बलुआ पत्थरों का उपयोग छत, फर्श, चौखटा, बीम, खंभे, दरवाजे और खिड़की के सिले, दीवार के सामने, बाड़–पोस्ट, मील का पत्थर, सड़क निर्माण आदि के लिए भी किया जाता है। यह बलुआ पत्थर नक्काशीदार खिड़कियां और जाली बनाने के लिए भी बहुत ही उपयुक्त है। वाराणसी, मिर्जापुर और सोनभद्र में कई ऐतिहासिक स्मारकों की हमने इस लेख में चर्चा की है। इतना ही नहीं, कोलकाता का संेट पॉल कैथेड्रल और सासाराम में शेरशाह सूरी का मकबरा, भभुआ जिले में मां मुंडेश्वरी मंदिर इन्हीं बलुआ पत्थरों से बना हुआ है। शैल, परिभाषा के अनुसार, एक या एक से अधिक प्रकार के खनिजों से बने ठोस पदार्थ हैं जो विशेष प्रकार के गठनों में एक दूसरे से जुड़े हुए हैं। 'शैल' शब्द का प्रयोग मनुष्य द्वारा आकार और प्रयोग की जाने वाली चट्टानों के लिए किया जाता है। शैल के दो सबसे बुनियादी गुण हैंः खनिज संघटन और गठन। इन दो

गुणों के अलावा, इमारत में उपयोग किए गए शैल का रासायनिक संघटन उसके स्थायित्व के लिए एक और महत्वपूर्ण गुण है। इस प्रकार निर्माण सामग्री के खनिज और रसायन इसके लक्षण वर्णन के लिए महत्वपूर्ण पहलू हैं। निर्माण सामग्री के लक्षण वर्णन में पेट्रोफिजिकल और भू–रासायनिक गुणों का सहसंबंध बहुत उपयोगी है। रंग और गठन सजावटी स्मारकीय पत्थरों के सबसे महत्वपूर्ण गुण हैं। सतह का खुरदरापन निर्माण सामग्री के रंगों को प्रभावित करता है और यह सतह के क्षरण में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है।

यह सब इमारतें हमारी धरोहर हैं, आइये हम इनकी चर्चा भूविज्ञान के संदर्भ में करें। "भू–धरोहर" भूविज्ञान की उभरती हुई शाखा है। "भू–धरोहर" एक वर्णनात्मक शब्द है जो महत्वपूर्ण वैज्ञानिक, शैक्षिक, सांस्कृतिक या सौंदर्य मूल्य वाले भूवैज्ञानिक विशेषताओं के क्षेत्रों या क्षेत्रों जो शिक्षा और अनुसंधान के लिए महत्वपूर्ण हैं, पर लागू होता है। सांस्कृतिक रूप से महत्वपूर्ण भू–धरोहर स्थल ऐसे स्थान हैं जहां भूवैज्ञानिक विशेषताओं या परिदृश्यों ने सांस्कृतिक या ऐतिहासिक घटनाओं में भूमिका निभाई है। सौंदर्य की दृष्टि से महत्वपूर्ण भू–धरोहर स्थलों में ऐसे भू–दृश्य शामिल हैं जो अपनी भूवैज्ञानिक विशेषताओं या प्रक्रियाओं के कारण देखने में आकर्षक हैं। मानव जाति के इतिहास में प्राकृतिक रूप से पाये जाने वाले पत्थरों को सबसे महत्वपूर्ण निर्माण सामग्री माना जाता है क्योंकि निर्मित सांस्कृतिक धरोहरों का एक बड़ा हिस्सा इससे निर्मित किया गया है। एक विद्वान द्वारा व्यक्त किया गया है, "पत्थर ...... मनुष्यों द्वारा उनके जीवन के तथ्यों और उनके आध्यात्मिक और कलात्मक दर्शन को अभिलेख करने, अलंकृत करने, विज्ञापन देने या संरक्षित करने के साथ–साथ आश्रय, सुरक्षा और सुरक्षित भंडारण प्रदान करते है" और इस प्रकार, आज के वैज्ञानिक और संरक्षक अतीत की इन सभी उत्कृष्ट कृतियों और स्मृतियों (स्मारकों, मूर्तियों और धार्मिक अवशेषों) को भविष्य की पीढ़ियों के लिए खराब होने से संरक्षित करने की जिम्मेदारी लेते हैं। इसलिए कैमूर शैल समूह के मंगेसर और धंड्रौल बालुकाश्म भारत के एक प्रतिष्ठित धरोहर पत्थर के लिए मानदंड पूरा करता है और उसको ग्लोबल "भू–हैरिटेज स्टोन रिसोर्स" में शामिल करने के हमारे प्रयास जारी हैं।

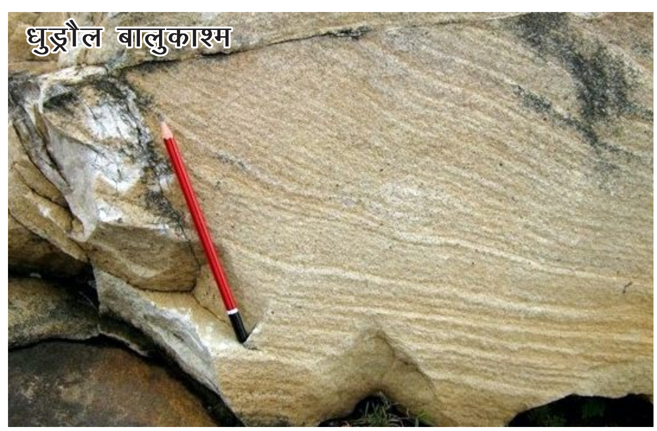

चित्र 1 : मंगेसर बालुकाश्म और धंड्रोल बालुकाश्म के क्षेत्र फोटोग्राफ

जलवायु इंजीनियरिंग

सुरभि
वा.हि.भू. संस्थान, देहरादून

जलवायु इंजीनियरिंग क्या है ?

ग्लोबल वार्मिंग और इसके खतरे को प्रतिबंधित करने के प्रयास में प्रौद्योगिकी ने नवाचार और विज्ञान को एक करके जलवायु इंजीनियरिंग की अवधारणा को सफलतापूर्वक विकसित किया है। जब तक जलवायु इंजीनियरिंग की संकल्पना का जन्म नहीं हुआ था, तब तक ग्लोबल वार्मिंग नीति निर्माताओं, पर्यावरणविदों और वैज्ञानिकों के बीच चर्चा का एक गंभीर विषय रहा करता था।

क्लाइमेट इंजीनियरिंग, जिसे आमतौर पर जियो इंजीनियरिंग के रूप में जाना जाता है वह पृथ्वी की जलवायु योजना में एक विचारशील प्रयास है। जलवायु इंजीनियरिंग, ग्लोबल वार्मिंग को सीमित करने के लिए संभावित विकल्पों की लाइन में शमन और अनुकूलन के बाद तीसरे स्थान पर है।

जलवायु इंजीनियरिंग या आमतौर पर जियो–इंजीनियरिंग, जलवायु परिवर्तन का मुकाबला करने के लिए पृथ्वी की जलवायु प्रणाली में जानबूझकर और बड़े पैमाने पर हस्तक्षेप है। जलवायु इंजीनियरिंग की मुख्य श्रेणियां सौर भू–अभियांत्रिकी और कार्बन डाइऑक्साइड निष्कासन हैं। सौर भू–अभियांत्रिकी, या सौर विकिरण संशोधन, मानव–जनित जलवायु परिवर्तन को सीमित या उलटने के लिए कुछ सूर्य के प्रकाश (सौर विकिरण) को वापस अंतरिक्ष में प्रतिबिंबित करेगा। कार्बन डाइऑक्साइड हटाने से तात्पर्य वातावरण से कार्बन डाइऑक्साइड गैस को हटाने और सीक्वेंसिंग से है। दोनों के बीच के अंतर को कभी–कभी सौर जियोइंजीनियरिंग के रूप में वर्णित किया जाता है जो ग्रह के शॉर्टवेव विकिरण बजट को संशोधित करता है और कार्बन डाइऑक्साइड को हटाने से इसके लॉन्गवेव विकिरण बजट को संशोधित करता है ।

ग्रीनहाउस गैस उत्सर्जन और अनुकूलन को कम करने के साथ–साथ जलवायु परिवर्तन या इसके प्रभावों को सीमित करने के लिए जलवायु इंजीनियरिंग दृष्टिकोण को कभी–कभी संभावित पूरक विकल्प के रूप में देखा जाता है। वैज्ञानिकों के बीच इस बात पर पर्याप्त सहमति है कि सौर जियोइंजीनियरिंग और कार्बन डाइऑक्साइड निष्कासन उत्सर्जन को कम करने का विकल्प नहीं हो सकता है। यह देखते हुए कि जलवायु परिवर्तन को संबोधित करने के लिए सभी प्रकार के उपायों की आर्थिक, राजनीतिक या भौतिक सीमाएं हैं, कुछ जलवायु इंजीनियरिंग दृष्टिकोणों को अंततः प्रतिक्रियाओं के एक समूह के हिस्से के रूप में इस्तेमाल किया जा सकता है, जिसका उद्देश्य जलवायु बहाली हो सकता है।

यद्यपि प्रभावशीलता दुष्प्रभावों और अप्रत्याशित परिणामों पर बड़ी अनिश्चितताएं हैं, तथापि अधिकांश विशेषज्ञों का तर्क है कि ऐसे हस्तक्षेपों के जोखिमों को खतरनाक जलवायु परिवर्तन के जोखिमों के संदर्भ में देखा जाना चाहिए। बड़े पैमाने पर हस्तक्षेप से प्राकृतिक प्रणालियों को बाधित करने का एक बड़ा जोखिम हो सकता है जिसके परिणामस्वरूप एक दुविधा हो सकती है कि वे दृष्टिकोण जो अत्यधिक जलवायु जोखिम को संबोधित करने में अत्यधिक (लागत–) प्रभावी साबित हो सकते हैं, वे स्वयं पर्याप्त जोखिम पैदा कर सकते हैं। कुछ लोगों ने सुझाव दिया है कि इंजीनियरिंग की अवधारणा जलवायु उत्सर्जन में कमी के लिए राजनैतिक और सार्वजनिक दबाव को कम कर सकती है, जो समग्र जलवायु जोखिमों को बढ़ा सकती है वहीं

दूसरों का दावा है कि जलवायु इंजीनियरिंग का खतरा उत्सर्जन में कटौती कर सकता है।

सोलर जियोइंजीनियरिंग

सोलर जियोइंजीनियरिंग (एसजी) सूर्य के प्रकाश को पृथ्वी से दूर, या वातावरण या पृथ्वी की सतह की परावर्तनशीलता (अल्बेडो) को बढ़ाकर विक्षेपित कर देगी। ये विधियां जलवायु परिवर्तन शमन का विकल्प नहीं हैं क्योंकि वे वातावरण में ग्रीनहाउस गैस सांद्रता को कम नहीं करेंगे, और इस प्रकार कार्बन डाइऑक्साइड के कारण समुद्र के अम्लीकरण को संबोधित नहीं करेंगे। सामान्य तौर पर, सौर जियोइंजीनियरिंग परियोजनाएं वर्तमान में अपने प्रत्यक्ष जलवायु प्रभावों में तेजी से और प्रतिवर्ती प्रभाव डालने में सक्षम दिखाई देती हैं। विज्ञान, इंजीनियरिंग, और चिकित्सा के अमेरिका की नेशनल एकेडमी एका 2021 की रिपोर्ट में कहा गया हैः ''उपलब्ध अनुसंधान इंगित करता है कि एसजी सतह के तापमान को कम कर सकता है और संभावित सुधार कुछ जलवायु परिवर्तन से उत्पन्न जोखिम (जैसे, महत्वपूर्ण जलवायु पार करने से बचने के लिए ''tipping बिंदु ''या चरम मौसम के हानिकारक प्रभावों को कम करने के लिए)।''

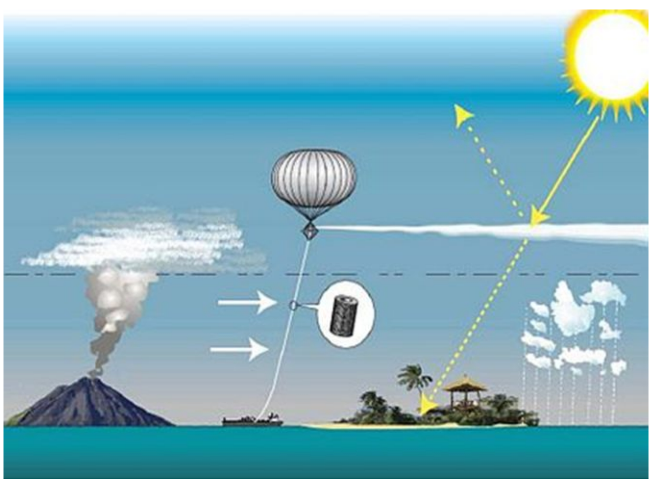

सौर भू–अभियांत्रिकी विधियों, में शामिल हो सकते हैंः

- स्ट्रैटोस्फेरिक एरोसोल इंजेक्शन, जिसमें छोटे कणों को ऊपरी वायुमंडल में इंजेक्ट किया जाएगा।
- समुद्री बादल चमकते हैं, जो बादलों को सफेद करने के लिए ठीक समुद्र के पानी का छिड़काव करेंगे और इस प्रकार बादल की परावर्तनशीलता को बढ़ाएंगे तथा
- साइरस क्लाउड थिनिंग, जो प्रमुखता से सोलर जियोइंजीनियरिंग नहीं है, लेकिन अन्य विधियों की कई भौतिक एवं विशेष लक्षणों से समानता रखता है।

सौर भू–अभियांत्रिकी को पृथ्वी की जलवायु को प्रभावित करने के लिए अपेक्षाकृत बड़े पैमाने पर कार्यान्वयन की आवश्यकता है। प्रत्यक्ष परिनियोजन लागत में कम से कम खर्चीले प्रस्तावों का अनुमान दसियों अरब अमेरिकी डॉलर सालाना है। यह इतना कम है कि इसे एकतरफा लागू करना कई एकल देशों के हित में हो सकता है। उद्धरण वांछित, सौर भू–अभियांत्रिकी क्षेत्रीय जलवायु व्यवधानों जैसे उपन्यास महत्वपूर्ण जोखिम पैदा कर सकती है।

कार्बन डाइऑक्साइड हटाने में

पेड़ लगाना कार्बन डाइऑक्साइड को हटाने का एक साधन है। कार्बन डाइऑक्साइड हटाने (कभी–कभी नकारात्मक उत्सर्जन प्रौद्योगिकियों या ग्रीनहाउस गैस हटाने के रूप में जाना जाता है) में ऐसे तरीके शामिल हैं जो सीधे वातावरण से ऐसी गैसों को हटाते हैं और वे प्राकृतिक प्रक्रियाओं को बढ़ावा देते हैं जो कार्बन डाइऑक्साइड को कम और अलग करते हैं। कुछ विधियां कार्बन कैप्चर और स्टोरेज के साथ ओवरलैप करती हैं। कार्बन डाइऑक्साइड हटाने को सभी टिप्पणीकारों द्वारा जलवायु इंजीनियरिंग नहीं माना गया है क्योंकि यह जरूरी नहीं कि बड़े पैमाने पर हो। इस श्रेणी की तकनीकों में शामिल हैंः

कार्बन को अलग करने के लिए कार्बन कैप्चर और स्टोरेज के साथ बायोएनर्जी और साथ ही ऊर्जा प्रदान करते हैं। परिवेशी वायु से कार्बन डाइऑक्साइड को हटाने के लिए प्रत्यक्ष हवा पर कब्जा कार्बन डाइऑक्साइड को अवशोषित करने के लिए वनीकरण,

वनीकरण और वन बहाली ंदक बनाना बायोचार (यानी में बायोमास आधारित ताप विद्युत संयंत्रों), मिट्टी में मिश्रण बनाने के लिए टेरा प्रेटा वैश्विक औसत तापमान वृद्धि को 1.5 और 2 डिग्री सेल्सियस से नीचे रखने के लिए आईपीसीसी मॉडल के कई अनुमान कार्बन डाइऑक्साइड हटाने की बड़े पैमाने पर तैनाती पर आधारित हैं। अधिकांश कार्बन डाइऑक्साइड हटाने के तरीके वर्तमान में महंगे हैं। कार्बन डाइऑक्साइड हटाने की तकनीक आमतौर पर कार्य करने में धीमी होती है, महंगी होती है, और ऐसे जोखिम होते हैं जो अपेक्षाकृत परिचित होते हैं, जैसे कि भूमिगत भंडारण संरचनाओं से कार्बन डाइऑक्साइड रिसाव का जोखिम। कार्बन डाइऑक्साइड हटाने, जैसे ग्रीनहाउस गैस उत्सर्जन में कमी, उनके पैमाने के समानुपाती प्रभाव डालते हैं। दूसरे शब्दों में, इन तकनीकों को उसी अर्थ में ''कार्यान्वित'' नहीं किया जाएगा जैसे सौर जियोइंजीनियरिंग वाले।

जलवायु इंजीनियरिंग अब तक :

आज तक, जलवायु इंजीनियरिंग परियोजना बड़े पैमाने पर नहीं है और प्रस्तावित योजना प्रयोगशालाओं के अंदर और कंप्यूटर मॉडलिंग तक सीमित रहीं हैं। जब भी इस शक्तिशाली अवधारणा को वास्तविक दुनिया के प्रयोग में ले जाने का कोई प्रयास किया गया , तो उसे चिंताएं और विवाद के कारण हटा दिया गया ।

जलवायु इंजीनियरिंग जोखिम और चुनौतियाँ :

जलवायु इंजीनियरिंग सकारात्मक और नकारात्मक संभावनाओं के बहस का विषय रहा हैं। प्रश्न उठते हैं क्योंकि जलवायु इंजीनियरिंग को केवल प्रयोगशाला और डेस्क अध्ययन के लिए सीमित कर दिया गया है। जलवायु इंजीनियरिंग के साथ आने वाले विभिन्न जोखिम और चुनौतियाँ इस प्रकार हैं:

1. लागत:

चूंकि शक्तिशाली वातावरण चित्र में आता है, विकास प्रौद्योगिकियां की लागत एक प्राथमिक चिंता हैं। जलवायु इंजीनियरिंग के लिए आवश्यक अनुमानित लागत का प्रकाशन अभी बाकी है। हालांकि, जलवायु इंजीनियरिंग के लिए प्रति वर्ष औसत लागत करोड़ों डॉलर का एक मोटा आंकड़ा कहा जाता है।

2. CO_2 उत्सर्जन का अपर्याप्त उत्तर:

महासागरीय अम्लीकरण जो CO_2 के कारण होता है अभी भी उसका एक पूर्ण समाधान नहीं है क्योंकि जलवायु इंजीनियरिंग केवल ग्लोबल वार्मिंग को हल करने और ग्रीनहाउस गैसों को हटाने में सक्षम है।

3. रक्षा उद्देश्य:

यदि जलवायु अभियांत्रिकी अच्छी तरह से सिद्ध हो जाती है तो इसका दुरूपयोग अकाल और युद्ध में देश में सूखा लाने के लिए किया जा सकता।

4. प्राकृतिक खतरा:

समताप मंडल एरोसोल इंजेक्शन परियोजनाएं संभवतः आकाश की उपस्थिति बदल सकती हैं। एरोसोल संभवतः बादलों के निर्माण को संशोधित कर सकते हैं। सूर्यास्त के आगमन और आसमान के नीले रंग में परिवर्तन भी हो सकता है।

निष्कर्ष :

जलवायु इंजीनियरिंग की अवधारणा के चारों ओर घूमने वाली जटिलता और अनिश्चितता कई हैं और कई अन्य कारक हैं जो परियोजना के पूर्ण पैमाने पर कार्यान्वयन में बाधा डाल सकते हैं। साथ ही, जलवायु नियंत्रण, तकनीकी अपरिपक्वता और अपर्याप्त लागत पर सीमित ज्ञान भी जलवायु इंजीनियरिंग के कार्यान्वयन की दर को बड़े पैमाने पर कम कर सकता है। महत्वपूर्ण वैश्विक चर्चा, प्रमुख पर्यावरण और सांस्कृतिक मुद्दों को शासन के हर स्तर को पार करने की जरूरत है तांकी जलवायु इंजीनियरिंग के मुद्दों को निर्धारित किया जा सके।

हिमानी या हिमनदों की झील और उसके प्रभाव

रोहित कुमार
शोधार्थी, भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान रुड़की
वेदिका पंत
स्वतंत्र शोधकर्ता, कुमायूं विश्वविद्यालय

पृथ्वी पर दो ध्रुव उपस्थित है जो हमेशा हिम से आच्छादित रहते है, परंतु एक तीसरा ध्रुव कहा जाता है जिसे हिमालय के नाम से जानते है। हिमालय संस्कृत के 'हिम' तथा 'आलय' दो शब्दों से मिलकर बना है जिसका शाब्दिक अर्थ 'बर्फ का घर' होता है। हिमालय को भारत का ताज भी कहा जाता है। जलवायु में परिवर्तन के अनुसार हिमानी के आकार प्रकार में बदलाव देखा जा रहा है। हिमालय के बर्फ और उसके द्वारा उत्पन्न जल सिर्फ वातावरण को नही परंतु वहाँ रहने वाले सारे लोगों और घाटी के लोगों का भी भरण पोषण करता है। हिमानी द्वारा उपलब्ध जल कृषि, जल ऊर्जा, भोजन, पारिस्थितिक तंत्र में योगदान देता है और भूमिगत जल के जलभृत को भी भरने में कार्य आता है। हिमालय की मुख्य नदियां हिम और हिमानी से पोषित हैं और इसलिए बारहों महीने वे भोजन, ऊर्जा और घरेलू उपयोग के लिए पानी के साथ दुनिया के कुछ सबसे अधिक आबादी वाले क्षेत्रों की सेवा करती हैं। हिम नदियों ने महान सभ्यताओं का पोषण किया है और महत्वपूर्ण पारिस्थितिक तंत्र को बनाए रखा है। फिर भी, ये जल प्रणालियाँ जलवायु, सामाजिक– आर्थिक और जन सांख्यिकीय परिवर्तनों के कारण एक चौराहे पर हैं। इसका उदाहरण पानी की बढ़ती मांग, भविष्य की उपलब्धता के बारे में अनिश्चितताऐं और बाढ़ और सूखे जैसी चरम घटनाओं की घटनाओं में वृद्धि के कारण तथा भी बढ़ गया है। बढ़ते हुए तापमान और कम गिरती हुई बर्फ बारी हिमानी को कमजोर कर रही है। हिमानी के नीचे, हिमानी के ऊपर, हिमानी के भीतर, हिमानी के अंत में और उसके कुछ दूर भी झील पायी जाती है जो की हिमानी के पिघलते पानी को एक जगह जमा करती है। यह एक प्राकृतिक प्रक्रिया है। जिसमें हिमनदों को गतिविधियों और उसके आगे या पीछे जाने पर पानी एक जगह झील की तरह इकट्ठा हो जाता है। हिमनदों के उतार–चढ़ाव के कारण कई पर्वत श्रृंखलाओं में हिमनद झीलों का निर्माण और विस्तार होता है।'

अब हम हिम झीलों के बनने के बारे में, हिम झील के विभिन्न स्वरूपों तथा उसके वर्गीकरण के बारे में जानेंगे। झीलों के निर्माण में हिमनद का ही योगदान होता है। हिमनदों के आगे बढ़ने पीछे जाने और टूटने और द्रव्यमान के घटने और बढ़ने से भी इसका निर्माण होता है

झीलों के निर्माण की निम्नलिखित कारणों में से किसी भी कारण से हो सकता है–

1 हिमनदों की अस्थायी वृद्धि या कमी

इस तरह के झील के निर्माण में विभिन्न प्रक्रियायें होती हैं। जिनका विवरण निम्न है।

1.1 हिमनदों आगे बढ़ते समय एक घाटी में समकोण पर दब जाता है या अपने स्वयं के मार्ग से तिरछा हो जाता है और जल के प्रवाह को रोक कर एक झील का निर्माण करता है ।

1.2 एक सहायक हिमनद अपने मुख्य हिमनद के घाटी में सीधी चट्टानों का कारण टुकड़ों में गिर जाता है और फिर हिम की बढ़ती हुई मात्र के अनुसार दुबारा एक नया हिमनद बनाने लगता है यदि हिम की मात्रा बढ़ती है और उसके फलस्वरूप घाटी का मार्ग अवरुद्ध होता है तब

एक झील का निर्माण होता है।

1.3 जब दो हिमानी एक साथ रहते है और किसी एक की लंबाई में अचानक कमी आती है तो उसके आखिरी छोर पर पानी जमा हो जाता है और दूसरा हिमानी उसके निकलते हुए पानी को अवरूद्ध कर देता है और एक झील का निर्माण होता है।

2 हिमनदों के स्थायी वृद्धि या कमी

उपरोक्त विवरण में स्थायी कारण के अनुसार हमेशा के लिए एक झील का निर्माण हो सकता है।

3 हिमानी के स्वरूप के साथ उपस्थित झीलें

हिमझील स्वयं हिमनद में और उसके ऊपर और नीचे स्थित हो सकती है। इसका निर्माण, साथ ही साथ इसका पोषण, बर्फ की भौतिक विशेषताओं के कारण होता है।

3.1 जब हिमानी के पिघलने के कारण उसके ऊपरी सतह पर एक छिद्र का निर्माण हो जाता है और पानी भरने के कारण वो झील में परिवर्तित हो जाता है उसे सुप्रा गलेश्यिल लेक के नाम से जानते है। उसे सतही हिमानी झील भी कहा जाता है।

3.2 जब हिमानी के नीचे सतह पर खोखले भाग में जल का जमाव होता है तो उसे सबग्लेशियल झील के नाम से जानते है। उसे ऊपर से नहीं देखा जा सकता है।

3.2 जब हिमानी के बीच में खोखले भाग में जल जमाव होता है है उसे एनग्लेश्यिल झील के रूप में जानते है। यह हिमानी के भीतर वृक्ष के डाल की संरचना जैसा भी हो सकता है।

नीचे हिम और हिमानी से कारण होने वाले खतरों का समय के अनुसार विवरण दिया गया हुआ है।

हिम और हिम नदी से उत्पन्न के खतरे के प्रकार		
समय	**खतरा**	**विवरण**
मिनट	हिम स्खलन	बड़े द्रव्य मान के हिम और हिम के साथ चट्टान का खिसकना या गिरना
घंटा	हिमानी का फटना ओर हिमानी झील से उत्पन्न बाढ़ (ग्लोफ)	विनाशकारी रूप से हिमानी में उपस्थित पानी का निकालना
दिन—सप्ताह	नदी और बारिश की बाढ़	एक भूभाग में पानी का प्रभाव होना।
महीने—वर्ष	हिमानी का अचानक बढ़ना (ग्लेशियर सर्जा)	हिमानी की प्रवाह दर में तेजी से वृद्धि
साल—दशकों	हिमानी में उतार—चढ़ाव	जलवायु के कारण बर्फ के सामने और ऊपर नीचे के उतार—चढ़ाव की स्थिति में बदलाव, परिवर्तन, इत्यादि।

हिमनद से संबंधित खतरे समान रूप से गंभीर हो सकते है। आज के परिवेश में उसका आकलन बहुत ही लंबे समय के अनुरूप (महीनों–वर्ष–दशकों) किया जा सकता है। जैसे हिमानी के लंबाई और चौराई का बढ़ाना या उसका घटना, परंतु हिम नदों और उसके हिम क्षेत्र में संभावित खतरों में से कुछ खतरे अल्पावधि (मिनट–घंटे–दिन) के होते है उसमें हिम स्खलन, हिमानी झील की बाढ़ बहुत ही कम अवधि के होते है। जिसके परिणाम स्वरूप मिनट से घंटे और दिन भर के भीतर सब कुछ तबाह हो जाता है। झीलों के विभिन्न स्वरूपों में से सब जोखिम वाले नहीं होते है। कुछ प्राकृतिक घटना होती हैं जो नियमित अंतराल से बनती है जैसे– सुपरा ग्लेश्यिल झील। वो एक समय के बाद खुद ही विलुप्त हो जाती है। एनग्लेश्यिल और सबग्लेशियल झीलों के संचय से आने वाली बाढ़ की भविष्यवाणी करना, अस्थायी और स्थानिक रूप से अधिक कठिन है। जो झीले आखिरी में उपस्थित हिमोढ़ – मॉरेन पर बनी हुई हैं आज के परिदृश्य में संभावित जोखिम वाली होती हैं।

यह झील की बाढ़ वाली घटना हिम क्षेत्र में सामान्य रूप से होती रही है। जैसे–जैसे आबादी बढ़ती है। उसी के अनुरूप खतरा बढ़ता जाता है। इसलिए झीलों के बारे में जानना, उसके आकार–प्रकार को समझना आने वाले संभावित खतरे के जोखिम को कम किया जा सकता है। झीलों के वर्गीकरण के उपरांत अत्यधिक गति से बढ़ने वाली झीलों की नियमित रूप से पहचान करके उस पर ध्यान रखने से भी खतरों को कम किया जाता है, बहुत सारे हिमालय की झीलों में पूर्व चेतावनी प्रणाली का विकास भी एक समाधान हो सकता है।

पृथ्वी के दक्षिणी ध्रुव पर मनुष्यों के प्रथम चरण

रमेश चन्द्र
पंचकूला, चण्डीगढ़

पृथ्वी के दुर्गम स्थानों पर पहुंचने के प्रयास मनुष्य सदा करते रहे हैं। ऐसे स्थानों की सूची में पर्वतों की चोटियां, पृथ्वी के ध्रुव, समुद्र की गहराइयों, सहारा जैसे मरुस्थल, कन्दराये, ज्वालामुखियों से लावा निकलने के मार्ग (वैंट पाइप्स) मुख्य हैं। विभिन्न प्रकार के समुद्री जहाजों तथा वायु यानों से पृथ्वी की परिक्रमा करने के प्रयास भी इस सूची में आते हैं। फ्रांसीसी साहित्यकार जूल्स वर्न (1828–1905 ई) के तीन उपन्यासः

1) ‘20000 लीग (लगभग 80000 किलोमीटर) की यात्रा समुद्र की सतह के नीचे’ (1864 ई)

2) ‘यात्रा पृथ्वी के केंद्र तक’ (1870 ई) तथा

3) ‘पृथ्वी की 80 दिनों में परिक्रमा’ (1872 ई) भी मनुष्य की इसी चाह के प्रतीक हैं।

उपरोक्त विचार यहां प्रस्तुत करने का कारण है 3 जनवरी 2022 का यह समाचारः भारतीय मूल की इंग्लैंड निवासी तथा वहां की सेना में कार्यरत (हर)प्रीत चंदी अंटार्कटिक महाद्वीप के तट से अकेले पैदल चलकर 2 जनवरी 2022 को 40 दिन और 7 घंटों में दक्षिणी ध्रुव पर पहुंच गयी। उनसे पूर्व यह यात्रा 38 तथा 39 दिनों में दो अन्य महिलाएं अलग–अलग प्रयासों में कर चुकी थी। प्रीत ने अपनी यात्रा के हर पग पर सामान से लदी स्लेज को स्वयं खींचा। दक्षिणी ध्रुव पर पहुंचने के प्रयास 19वीं शताब्दी में प्रारंभ हो गए थे। परंतु निम्नलिखित में हमारा अभिप्राय वर्ष 1910–1912 में किए गए दो प्रयासों से है।

दक्षिणी ध्रुव पर मनुष्यों के प्रथम चरण

वर्ष 1910 में इंग्लैंड के रॉबर्ट फॉल्कन स्कॉट के नेतृत्व में टेरा नोवा एक्सपेडीशन अंटार्कटिक महाद्वीप के तट पर पहुंची। इस एक्सपेडीशन का उद्देश्य अंटार्कटिक महाद्वीप के तट का सर्वेक्षण तथा दक्षिण ध्रुव पर सर्वप्रथम पहुंचना था। इसे व्यय के लिए धन विभिन्न सार्वजनिक स्रोतों तथा सरकारी खजाने से प्राप्त हुआ था। 1 नवंबर 1911 को, स्कॉट ने चार साथियों के साथ बर्फ से ढके रोस्स सागर के उत्तर पश्चिम कोने से दक्षिण दिशा में प्रस्थान किया और 17 जनवरी 1912 को यह दल दक्षिण ध्रुव पहुंच गया। परंतु स्कॉट और उनके साथियों का वापसी में आवश्यक रसद सामग्री निर्धारित स्थान पर ना मिलने के कारण मार्ग में ही देहांत हो गया।

वर्ष 1910 में ही नॉर्वे के रोल्ड अमुंडसन आर्कटिक सागर की यात्रा के लिए धन तथा फ्रेम नामक जहाज के प्रयोग के साधन जुटाए। परंतु उन्होंने गुप्त रूप से दक्षिण ध्रुव पहुंचने की योजना बनाई। उन्हें संदेह था कि यात्रा का उद्देश्य बदले जाने पर धन प्रदान करने वालों तथा फ्रेम के स्वामियों को आपत्ति हो सकती थी। नॉर्वे के नागरिक भी उनका विरोध कर सकते थे क्योंकि इससे इंग्लैंड की जनता तथा सरकार में रोष हो सकता था। नॉर्वे से अंटार्कटिक का सफर करते हुए रास्ते में 9 सितंबर 1910 को अमुंडसन ने स्कॉट को तार द्वारा सूचित किया कि वह भी दक्षिण ध्रुव पहुंचने के लिए निकल पड़े हैं। अमुंडसन ने अपनी यात्रा के लिए कुछ नए तरीके अपनाए जिनमें शीत के प्रभावों से निपटने के लिए नए प्रकार के वस्त्र तथा उचित भोजन और सामान से लदी स्लेजों को खींचने के लिए हस्की नस्ल के कुत्तों का प्रयोग मुख्य थे। अक्टूबर 1911 में अमुंडसन ने चार साथियों के साथ रोस्स सागर के उत्तर पूर्वी कोने से दक्षिण दिशा में प्रस्थान किया और 14 दिसंबर 1911 को यह दल दक्षिण ध्रुव पर सर्वप्रथम पहुंचने में सफल हो

गया। दक्षिण ध्रुव पर पहुंचने पर उनकी पूर्ण रूप से प्रशंसा ना होने का मुख्य कारण उनके छद्म तथा एक सीमा तक कपट पूर्ण कार्य थे।

कुछ अन्य जानकारी

स्कॉट तथा उनके साथियों के शवों के पास जो वस्तुएं मिली उनमें कुछ ग्लासऑपटेरिस फॉसिल भी थीं। अनुमान है कि यह फॉसिल उस समय एकत्र की गयी जब स्कॉट का दल भूख तथा शीत के कारण मृत्यु के कगार पर था। ग्लासऑपटेरिस फॉसिल विभिन्न महाद्वीपों पर भी भूवैज्ञानिकों को मिल चुकी थी। परंतु, वेगनर की कॉन्टिनेंटल ड्रिफ्ट थ्योरी का प्रसार तब तक आरम्भ नहीं हुआ था।

संदर्भः अमुंडसन तथा एस्कॉर्ट की यात्राओं के संबंध में कुछ बातें तो सामान्य ज्ञान है, परंतु यह लेख विकिपीडिया में उपलब्ध दक्षिणी ध्रुव पर विस्तृत जानकारी पर आधारित है।

द्रव समावेशः एक आत्मकथा

बरुण कुमार मुखर्जी
वा.हि.भू. संस्थान, देहरादून

मैं द्रव समावेश हूँ। मै इतना अति सूक्ष्म हूँ कि मुझे मनुष्य अपने नेत्रों से देख नहीं सकता है। मुझे देखने के लिए सरल सूक्ष्मदर्शी का प्रयोग करना अत्यंत आवश्यक है। उसमें भी मैं नजर तभी आता हुँ जब सरल सूक्ष्मदर्शी में लगे लेंस तंत्र से मेरे सूक्ष्माकार को कुछ हद तक आवर्धित किया जाता है। सूक्ष्मदर्शी की सहायता से मुझे देखकर मेरी बनावट, मेरे आंतरिक रुप, मेरी विविधता इत्यादि का अध्ययन किया जा सकता है। आप आश्चर्य कर रहे होंगे कि यह कौन हमारा समय खराब कर रहा है व इसकी उपयोगिता क्या है? हमने तो इसके बारे में कहीं नहीं सुना। अभी, बस एक निवेदन है कि थोड़ा धैर्य रखें व धीरे धीरें आगे पढ़ते जायें। शायद मैं आपके हृदय में कुछ स्थान पा सकुं। यदि आपके हृदय में जगह नहीं भी हुई तो कुछ न कुछ जानकारी तो अवश्य बढ़ा ही जाऊंगा। इतना विश्वास आप सभी कर सकते हैं। आज आपके सामने हूँ तो इसका अर्थ है कि मेरा प्रकृति में अस्तित्व तो है पर जैसा मैंने पहले कहा कि आप मुझे खुले नेत्रों से नहीं देख सकते हैं बल्कि मेरा साक्षात्कार सुक्ष्मदर्शी के माध्यम से हो सकता है। इसका सीधा अर्थ है कि मैं अति विशिष्ट हूँ सामान्य रुप में नही मिलूंगा। मुझसे मिलने के लिये तकनीक का सहारा चाहिये। मेरा जन्म मैग्मा के ठंडे होने की प्रक्रिया के साथ ही क्रिस्टलीकरण के समय शुरु हो जाता है। इस प्रक्रिया में मैं चट्टानों के खनिजों में फंस जाता हूँ। मैं ज्यादातर क्वार्टज खनिज में पाया जाता हूँ। क्वार्टज खनिज पृथ्वी की ऊपरी सतह में प्रचुर मात्रा में पाया जाता है। ये क्वार्टज अनेक प्रकार के विभिन्न रुपों, आकार, और रंग के कारण बहुत आकर्षक और मूल्यवान होते हैं। क्वार्टज खनिज में मेरे अस्तित्व के कारण मैं सभी प्रकार की आग्नेय, अवसादी तथा रूपांतरित चट्टानों (जैसे–

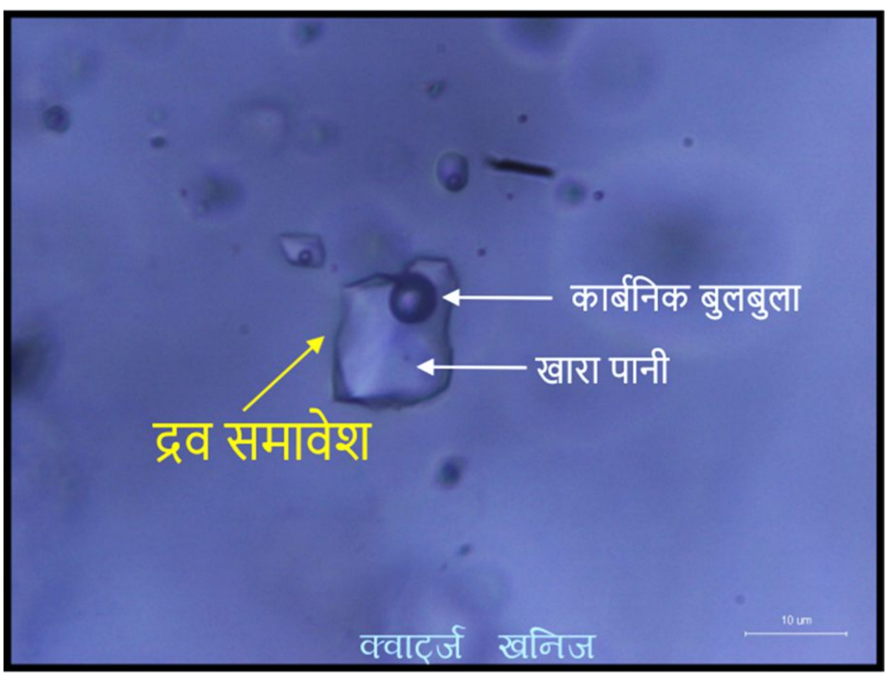

ग्रेनाईट, चूना पत्थर, नाइस, शिष्ट इत्यादि) में भी पाया जाता हूँ। क्वार्टज की विस्तृत विविधता के कारण इसकी उपयोगिता की विस्तृत श्रृंखला होती है जिसमें मैं प्रचुर मात्रा में पाया जाता हूँ। क्वार्टज के बदले रुप के हिसाब से मैं भी अपना रंग रूप बदलता हूँ।

मैं अतिसूक्ष्म 1– 70 माइक्रोमीटर के आकार का बुलबुला हूँ। मेरे विभिन्न रुप होते हैं, मैं अधिकांशतः गोलाकार, अर्ध गोलाकार और बेलनाकार रूप में रहना पसंद करता हूँ। मैं तरल और गैस का बुलबुला होता हूँ जो कि खनिज के बाहरी और आंतरिक भागों में फंसा रहता हूँ। मैं कभी–कभी खनिज की दरारों में भी फंस जाता हूँ। मेरे प्रचुर मात्रा और सूक्ष्म होने के कारण मैं खनिजों की सभी सतहों में रहने वाला अनमोल और अत्यधिक उपयोगी तरल और गैसीय पदार्थ बनता हूँ।

मैं एकांत और समूह दोनों तरह से रहना पसंद करता हूँ। मैं अक्सर अयस्क के बनने वाले तरल पदार्थ और घुलित ठोस पदार्थ के गर्म से ठंडा होने पर बनता हूँ। मेरे कई प्रकार के रासायनिक रूप होते हैं जैसे H_2O, H_2O-NaCl, H_2O-CO_2, CO_2, N_2,CH_4 इत्यादि। मैं अत्यधिक ठंडा होने पर द्रव से ठोस पदार्थ में बदलता जाता हूँ और हैलाइट, सिल्वाइट, जिप्सम में रूपांतरित होकर क्रिस्टल बनाता हूँ। मैं अनेक संरचनाओं में पाया जाता हूँ जिन्हें मोनोफेज, बाईफेज तथा ट्राईफेज कहा जाता है। मेरे क्रिस्टल में फंसने के कई तरीके होते हैं। फंसने के इन तरीकों को प्राथमिक (प्राइमरी) और द्वितीयक (सेकेंडरी) रूप में देखा जाता है। फंसने के ये तरीके खनिज के बनने से लेकर बनावट तक सभी स्थितियों के बारे में पता करने में सहयोगिता प्रदान करते हैं।

मैं खनिजों के बीच फंसा तरल पदार्थ हूँ, जो कि खनिज पर्यावरण की संरचना तापमान और दबाव का रिकॉर्ड संरक्षित करता हूँ। मेरे में अक्सर दो या अधिक चरण होते हैं। ज्यादातर एक वाष्प बुलबुला एक तरल चरण के साथ ही समावेशन में मौजूद होता है। जिसे सरल तापमान में गर्म करने पर संभावित तापमान देता हूं जो की चट्टानों की संरचना के प्रत्यक्ष सुराग भी प्रदान करता है।

हाल के वर्षों में वैज्ञानिकों द्वारा द्रव समावेशन के शोध को अधिक गहराई से निम्नलिखित को जानने के लिए किया जा रहा है।

1. सतही चट्टानों के स्थलमंडल की गहराईयों में अवस्थित स्रोतों को जानने के लिये
2. अल्ट्राक्रस्टल रुपांतरण के तरीके जानने के लिए
3. क्रस्ट मेंटल का विलय जानने के लिए
4. कार्बनिक प्रतिक्रिया के लिए
5. गैसीय बुलबुले द्वारा जीवाश्म की खोज के लिए
6. प्राचीन जलवायु परिस्थितियों के सुराग के लिये, इत्यादि

इस प्रकार आपने देखा कि वैज्ञानिक मुझसे किस किस तरह के राज उगलवाने की कोशिश करते हैं। वैज्ञानिकों के प्रयास के अभाव में मेरा अस्तित्व चट्टानों में खनिजों के बीच ही फंसा रहता और मैं गुमनाम ही रह जाता। इसलिए मैं वैज्ञानिकों का आभारी हूँ जिनके प्रयासों से मेरा अस्तित्व का ज्ञान संसार को हुआ है तथा जो मेरी उपयोगिता को समझते हैं। इस बार तो मैंने एक छोटा सा प्रयत्न किया अपने परिचय का। यदि आपको मेरी बात अच्छी लगी तो मैं यह कहानी अधिक विस्तार से लिखने का प्रयास भी करुंगा। आपके स्नेह, जानकारी की इच्छा तथा आपके समय व धैर्य के लिये धन्यवाद ।

भारतीय ग्रीष्मकालीन मानसून

अमरजीत विद्यार्थी
भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान खड़गपुर, पश्चिम बंगाल

विश्व में अनेक मानसून प्रणालियां पायी जाती है। जिनमें दक्षिण एशियाई मानसून, पूर्वी एशियाई मानसून, अफ्रीकी मानसून और उत्तरी अमेरिका मानसून आदि आते हैं। अपना भारत भी इसी प्रकार दक्षिण एशियाई मानसून प्रणाली के अंतर्गत आता है। भारत में मानसून, जिन्हें भारतीय शीतकालीन मानसून या उत्तर–पूर्वी मानसून और भारतीय ग्रीष्मकालीन मानसून या दक्षिणी–पश्चिमी मानसून के नाम से जाना जाता है, मुख्यतः प्रभावी है। इन दोनों में भी भारत को सर्वाधिक प्रभावित ग्रीष्मकालीन मानसून करता है। यह मानसून ग्रीष्मकालीन इसीलिए कहा जाता है क्योंकि यह जून, जुलाई, अगस्त और सितंबर के महीनों में प्रभावी रहता है। यह मानसून की घटना मात्र भूमि या जल क्षेत्र से संबंधित नहीं है बल्कि दोनों का एक सामंजस्य है जिससे मानसून की स्थिति पैदा होती है। भारत के परिप्रेक्ष्य में कहें तो प्राचीन काल से ही भारत कृषि प्रधान अर्थव्यवस्था रहा है। इसका मुख्य कारण यह भारतीय ग्रीष्मकालीन मानसून ही है जो भारत की कृषि आधारित आर्थिक स्थिति को पूर्णतयाः प्रभावित करता है अतः भारत में जब जलवायु की चर्चा होती है तो मानसून उस में सर्वाधिक महत्वपूर्ण अंग है।

जब इस मानसून नामक घटना का वैज्ञानिक विश्लेषण करते हैं, तो पाते हैं कि यह उच्च दाब परिस्थिति से निम्न दाब परिस्थिति की ओर बहने वाली आद्रपूर्ण हवाओं का नाम है। भारत में गर्मी के समय अधिक सौर विकिरण कर्क रेखा और उसके आसपास पड़ता है जोकि 23½° उत्तरी अक्षांश पर स्थित है। इस स्थिति में भारतीय भूमि क्षेत्र, हिंद महासागर की तुलना में अधिक गर्म हो जाता है। इसका कारण जल की तुलना में भूमि की विशिष्ट ऊष्मा अधिक होना है। जैसे

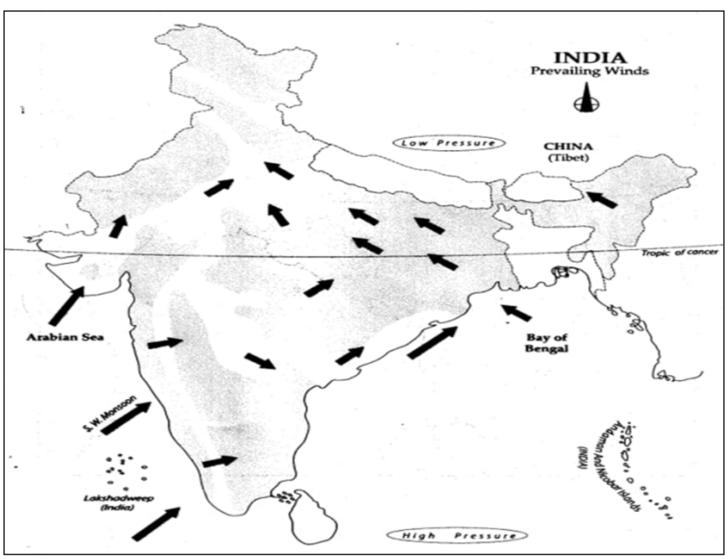

चित्र : भारतीय उपमहाद्वीप पर मानसूनी हवाएं।
स्रोतः एनसीईआरटी कक्षा 9 की भूगोल पुस्तक से।

ही यह तापमान का अंतर भूमि और जल क्षेत्र के बीच बनता है तो भूमि क्षेत्र पर निम्न दाब की स्थिति तथा हिंद महासागरीय क्षेत्र में उच्च दाब की स्थिति बनती है। इस दाब के अंतर के कारण जून से लेकर सितंबर तक एक विशेष प्रकार की आद्रपूर्ण हवाएं पूरे भारत को धीरे–धीरे अपने चपेट में ले लेती हैं और फलस्वरूप विभिन्न स्थानों पर भौगोलिक आधार पर कम या अधिक मानसूनी वर्षा होती है।

मानसून अपने आप में एक मूल घटना नहीं है अपितु इसके अनेकों कारक हैं। यह अनेकों कारकों पर निर्भर करता है। मानसून की प्रति वर्ष कभी प्रबलता और कभी दुर्बलता कुछ ऐसे ही कारकों पर निर्भर करती है जिन्हें अर्द्ध–स्थायी कारक कहते हैं। ये अर्द्ध–स्थायी कारक इस प्रकार हैं – तिब्बती उच्च दाब क्षेत्र, उष्णकटिबंधीय पूर्वी धाराएं, सोमाली धाराएं, मानसून ट्रफ और मैस्करन उच्च दाब क्षेत्र।

ये सब मिलकर भारतीय ग्रीष्मकालीन मानसून को प्रभावित करते हैं और इनके प्रतिवर्ष वैज्ञानिक विश्लेषण के आधार पर ही भारतीय क्षेत्र पर मानसूनी वर्षा की तीव्रता निर्भर करती है। अतः यह मानसून के आधार स्तंभ माने जा सकते हैं जिन पर गत वर्षों में अनेक वैज्ञानिक विश्लेषण हुए हैं।

विश्व में 19 वीं शताब्दी और भारत में 20 वीं शताब्दी के उत्तरार्ध में हुई औद्योगिक क्रांति के फलस्वरूप ग्लोबल वार्मिंग जैसी घटनाएं घटित हुयी हैं, जिनके कारण मानसून के विभिन्न कारकों का प्रभावित होना पाया गया है। अत्याधिक प्रदूषण भी इन कारकों को कहीं प्रबलता तो कहीं दुर्बलता प्रदान करता हुआ पाया गया है। ऐसी परिस्थिति में भारत जैसे मानसूनी वर्षा पर अधिकांशतः आधारित कृषि अर्थव्यवस्था के लिए ग्लोबल वार्मिंग और स्थानीय स्तर पर विभिन्न वायु प्रदूषण के कारकों का भारतीय ग्रीष्मकालीन मानसून पर शोध भारत के लिए बहुत आवश्यक है। भविष्य में भारत में मानसून की प्रबलता और दुर्बलता इन प्रदूषकों के कारण प्रभावित हो सकती है ऐसे संकेत विभिन्न वैज्ञानिकों द्वारा पाए गए हैं। सैटेलाइट द्वारा प्राप्त डाटा और मॉडल के द्वारा इन बातों की पुष्टि हुई है। वायु प्रदूषकों में ब्लैक कार्बन और अत्यधिक धूल कण इन अर्द्ध–स्थायी कारकों को प्रभावित करते पाए गए हैं जोकि फलस्वरूप भारतीय ग्रीष्मकालीन मानसून को प्रभावित करते हैं।

अक्षय ऊर्जा : विश्व एवं भारत के परिप्रेक्ष्य में

प्रवीण कुमार
रसायन विज्ञान विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय

वर्तमान काल में औद्योगिकरण जीवाश्म ईंधन पर अत्याधिक प्रदूषणकारी उद्योगों की वृद्धि से जुड़ा है। औद्योगिकरण के इस दौर ने मनुष्य के जीवन को सामाजिक और आर्थिक तौर पर प्रभावित किया है। हमारा समाज जो पहले कृषि समाज था, उसका धीरे–धीरे औद्योगिक समाज में परिवर्तन हो रहा है। इसने देशों के बीच विनिर्माण को आधार बनाकर अर्थव्यवस्था की दौड़ लगा दी है। उन्नत प्राचीन सभ्यता से सुशोभित भारत जैसे देशों को लूट कर पश्चिमी देशों ने पिछली शताब्दी में काफी विकास किया, जो मुख्यतः औद्योगिकरण पर आधारित था। जिसमें पश्चिमी देशों ने जीवाश्म ईंधनों का भारी मात्रा में उपयोग करके आज के समय में काफी अच्छी आर्थिक स्थिति प्राप्त की है। परंतु इस चक्कर में इन देशों ने हमारी पृथ्वी के वातावरण को बहुत नुकसान पहुंचाया है। आज भारत, चीन जैसे बड़ी आबादी वाले देशों ने भी आर्थिक विकास के लिए औद्योगिकरण की नीति अपनाई हुई है, जिस वजह से ग्रीन हाउस गैसों के उत्सर्जन में भारी वृद्धि देखने को मिल रही है।

ग्रीन हाउस गैसों के उत्सर्जन को स्थिर एवं पृथ्वी को जलवायु परिवर्तन के खतरे से बचाने के लिए वर्ष 1994 में यूनाइटेड नेशन फ्रेमवर्क कन्वेंशन ऑन क्लाइमेट चेंज (यूएनएफसीसीसी) का गठन किया गया। जलवायु परिवर्तन पर यूएनएफसीसीसी में शामिल सदस्य देशों का सम्मेलन कॉन्फ्रेंस ऑफ द पार्टीज (सीओपी) कहलाया गया, जो साल 1995 से वार्षिक रूप से लगातार होता आ रहा है। वर्ष 2016 में सीओपी की 21वीं बैठक में सभी सदस्यों ने मिलकर कार्बन उत्सर्जन में कटौती के जरिए वैश्विक तापमान वृद्धि को 2 डिग्री सेल्सियस के अंदर रहने और 1.5 डिग्री सेल्सियस के आदर्श लक्ष्य को लेकर एक व्यापक सहमति बनाई जिसे "सी ओ पी 21 समझौता" या "पेरिस समझौता" कहा जाता है। जलवायु परिवर्तन पर

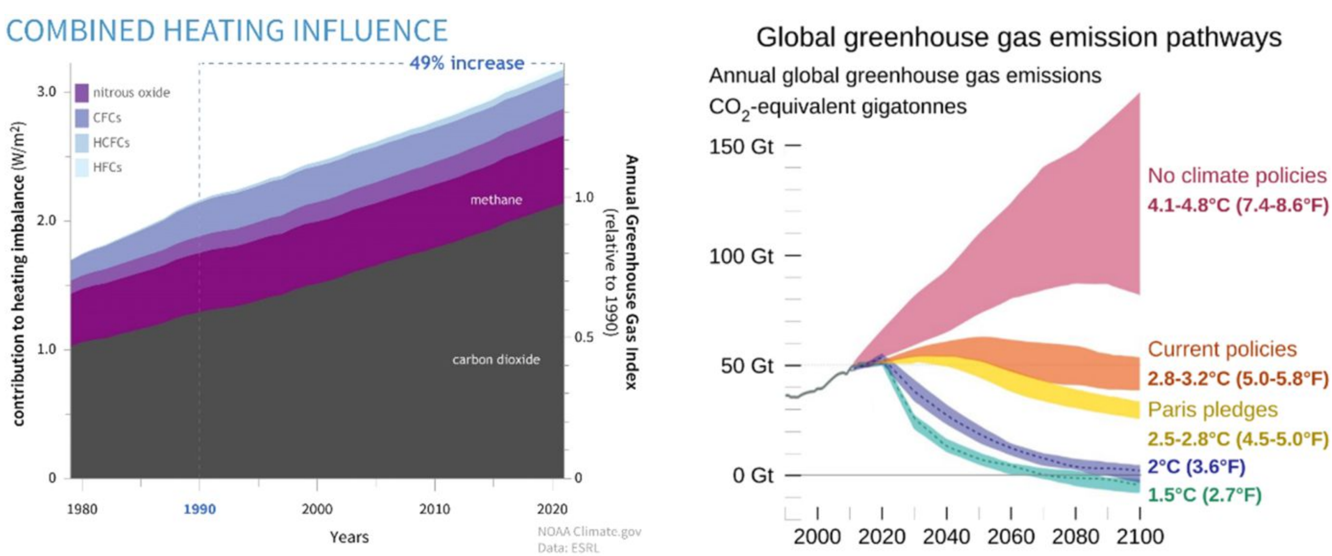

चित्र 1 : विभिन्न ग्रीनहाउस गैसों का संयुक्त ऊष्मीय प्रभाव और वर्तमान वैश्विक नीतियां

सहमति बनाने में 21 साल लगने की मुख्य वजह जलवायु परिवर्तन से निपटने की जिम्मेदारी और उसके आर्थिक बोझ के उचित बंटवारे का रहा है। विकसित देश जो 20 वीं सदी में जीवाश्म ईंधनों का दोहन कर आज मजबूत आर्थिक स्थिति में बैठे हैं। वहीं भारत जैसे विकासशील देशों पर वैश्विक उत्सर्जन बढ़ाने का दोष लगाते हैं और कार्बन उत्सर्जन में वृद्धि की अपनी ऐतिहासिक जिम्मेदारी से बचते रहे हैं। हालांकि आज भी विकासशील और विकसित देशों के बीच प्रति व्यक्ति कार्बन उत्सर्जन में बड़ा अंतर है।

भारत जलवायु परिवर्तन के खतरों से प्रभावित होने वाले देशों में से प्रमुख देश है। वर्ष 1950 से ही भारतीय मानसून में गिरावट देखी जा रही है। विश्व बैंक के अनुसार दुनिया के औसत तापमान में मात्र 2 डिग्री सेल्सियस का इजाफा भारत के मानसून को अप्रत्याशित बना देगा जो कि भारत की कृषि पर आधारित लगभग 50% जनसंख्या को सीधे तौर पर प्रभावित करेगा। इसके साथ–साथ कार्बन उत्सर्जन में कटौती का असर भी भारत जैसी तेजी से बढ़ती अर्थव्यवस्थाओं पर सबसे अधिक चोट पहुंचाएगा। जहां ऊर्जा आधुनिक जीवन शैली का अविभाज्य अंग बन गई है, दुनिया के सभी देशों ने कार्बन उत्सर्जन को कम करने के लिए प्रदूषणकारी जीवाश्म ईंधनों के स्थान पर अक्षय ऊर्जा को प्रयोग में लाने का निर्णय लिया है। अक्षय ऊर्जा या नवीकरणीय ऊर्जा में सारी ऊर्जाएं शामिल है जो प्रदूषण कारक नहीं है और जिनके स्रोत का पुनर्भरण हो सकता है। जैसे सौर ऊर्जा, पवन ऊर्जा, जल विद्युत ऊर्जा, ज्वार भाटा से प्राप्त ऊर्जा, बायोगैस जैव इंधन आदि। अक्षय ऊर्जा ही भविष्य के विकास का प्रमुख स्तंभ है। अक्षय ऊर्जा के महत्व को ध्यान में रखते हुए भारत सरकार ने वर्ष 2004 में अक्षय ऊर्जा के विकास के बारे में जागरूकता अभियान के तौर पर 'अक्षय ऊर्जा दिवस' हर साल 20 अगस्त को मनाने की घोषणा की। भारत दुनिया का सबसे तीसरा सबसे बड़ा बिजली उपभोक्ता है, साथ ही तीसरा सबसे बड़ा अक्षय ऊर्जा उत्पादक देश भी है। नवंबर 2021 तक भारत की अक्षय ऊर्जा क्षमता 150 गीगावॉट तक पहुंच चुकी है, जबकि भारत में अक्षय ऊर्जा से 2022 तक 175 मेगावाट और पेरिस समझौते के अनुसार 2030 तक 500 गीगावॉट क्षमता अनुसार उत्पादन का लक्ष्य निर्धारित किया है।

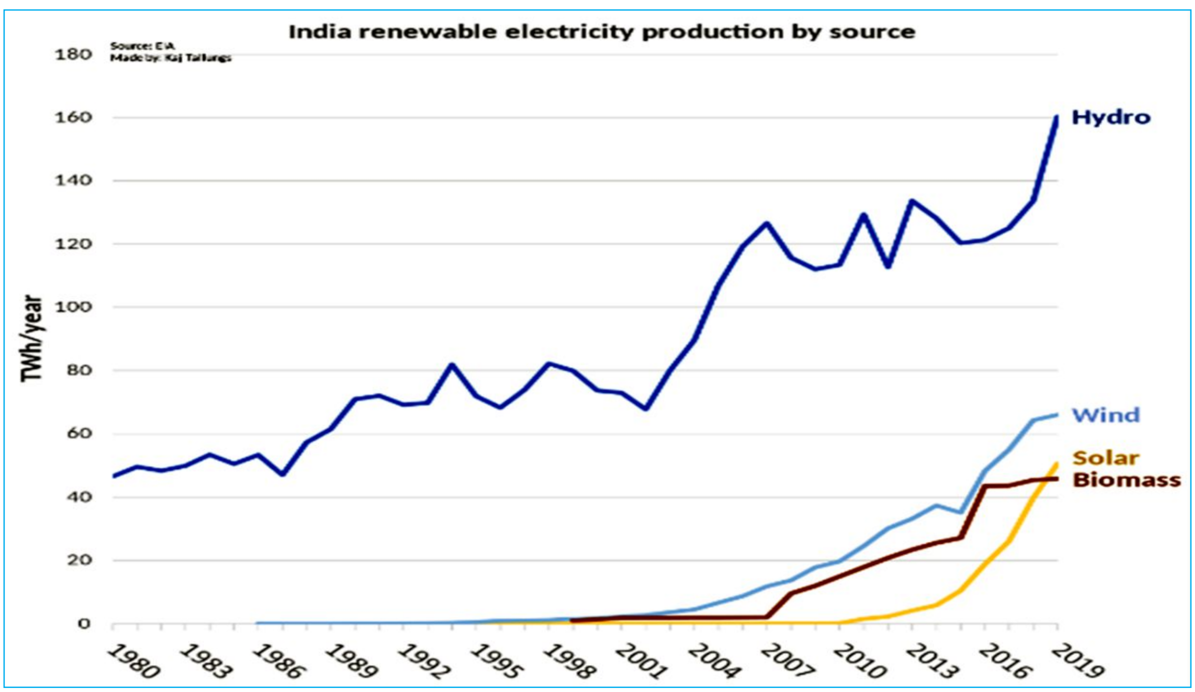

चित्र 2 : भारत में विभिन्न स्रोतों द्वारा अक्षय ऊर्जा उत्पादन

भारत की अक्षय ऊर्जा के मुख्य स्रोत क्रमश हाइड्रो पावर, सौर ऊर्जा, पवन ऊर्जा, छोटी पवन बिजली, बायोमास, शामिल है। नदियों से प्राप्त हाइड्रो पॉवर के आलावा भारत में सौर ऊर्जा का भविष्य काफी सुनहरा है। एक उष्णकटिबंधीय देश होने के कारण यहां लगभग पूरे वर्ष विकिरण प्राप्त होता है, जो कि 3000 घंटे धूप के बराबर होता है। अपनी क्षमता को ध्यान में रख विश्व स्तर पर भारत ने 'इंटरनेशनल सोलर अलायंस' की शुरुआत की, जिसमें अभी तक 124 सदस्य देश शामिल हो चुके हैं। इस संगठन का मुख्य उद्देश्य सौर ऊर्जा का क्षमता पूर्वक उपयोग करना है। इसके अलावा भारत और यूनाइटेड किंगडम द्वारा सीओपी–26 सम्मेलन में सौर ऊर्जा का दोहन करने और सीमाओं के पार निर्बाध रूप से यात्रा करने के लिए "**एक विश्व, एक सूर्य, एक ग्रिड**" की घोषणा की। इसके अलावा पवन ऊर्जा के उत्पादन में भी भारत का विश्व में चौथा स्थान है। भारत की कुल स्थापित बिजली क्षमता (392 गीगावॉट) का 40% हिस्सा गैर जीवाश्म ईंधन आधारित ऊर्जा (158 गीगावॉट) है। परंतु जनसंख्या के साथ बढ़ती ऊर्जा की मांग भारत के लिए आने वाले समय में कठिन चुनौती पैदा करती है जिसके लिए भारत को इसमें काफी निवेश की जरूरत है। भारत के साथ–साथ अन्य विकासशील और अविकसित देशों की वित्तीय सहायता करना वैश्विक संगठनों और विकसित देशों की मुख्य जिम्मेदारी होनी चाहिए। अक्षय ऊर्जा के क्षेत्र में अभी तक उठाए गए कदम बहुत सीमित और देरी से उठाए गए हैं। हमें जलवायु परिवर्तन के भविष्य को भविष्य का खतरा समझकर नहीं बल्कि आज की आपातकालीन स्थिति के रूप में देखना होगा और इसके लिए हर मनुष्य को अपना योगदान देना होगा।

ये तभी हो सकता है जब हमारी भावनाएं स्वार्थ के लिए न होकर परमार्थ के लिए हों और भारतीय संस्कृति के प्राण वेदों ने विश्व को समझाया है कि–

माता भूमिः पुत्रो अहं पृथिव्याः ।। अथर्ववेद ।।

अर्थात् भूमि मेरी माता है और मैं उसका पुत्र हूं।

पृथ्वी की उत्पत्ति और वर्तमान समस्या

संजय गोस्वामी
यमुना जी/13, अणुशक्तिनगर, मुंबई –94

वैज्ञानिकों के अनुसार पृथ्वी ग्रह की रचना लगभग 4.54 बिलियन वर्ष पूर्व हुई और इसका अधिकांश भाग 10–20 मिलियन वर्षों के भीतर पूरा हुआ। समय के साथ, बड़े हिस्से एक दूसरे से टकराते गए और बड़े पदार्थ बनते गए, जो अंततः सूक्ष्म होते गए। वे बीच के आसपास हैं। पदार्थों के गिरने, घूर्णन की गति में वृद्धि तथा गुरुत्वाकर्षण के दबाव ने केंद्र में अत्याधिक गतिज ऊर्जा का निर्माण किया। किसी अन्य प्रक्रिया के माध्यम से एक ऐसी गति, जो कि इस निर्माण को मुक्त कर पाने में सक्षम हो, पर उस ऊर्जा को किसी अन्य स्थान पर स्थानातंरित कर पाने में इसकी अक्षमता के परिणामस्वरूप चकरी का केंद्र गरम होने लगा और अन्ततः हीलियम में हाइड्रोजन के नाभिकीय गलन की शुरुआत हुई और अन्ततः, संकुचन के बाद एक टी टौरी तारे के जलने से सूरज का निर्माण हुआ। इसी बीच, गुरुत्वाकर्षण के कारण जब पदार्थ नये सूर्य की गुरुत्वाकर्षण सीमाओं के बाहर पूर्व में बाधित वस्तुओं के चारों ओर घनीभूत होने लगा, तो धूल के कण और शेष सूक्ष्म–ग्रहीय चकरी छल्लों में पृथक होना शुरु हो गई। समय के साथ–साथ बड़े खण्ड एक–दूसरे से टकराये और बड़े पदाथों का निर्माण हुआ, जो अन्ततः सूक्ष्म–ग्रह बन गये। इसमें केंद्र से लगभग 150 मिलियन किलोमीटर की दूरी पर स्थित था। रेडियोमीट्रिक समयांकन की विधि द्वारा खोजे गये वैज्ञानिक प्रमाण संकेत देते हैं कि पृथ्वी की आयु 4.54 अरब वर्ष है। इस प्रकार पृथ्वी के इतिहास के प्रथम युग की शुरुआत लगभग 4.54 अरब पूर्व सौर–निहारिका के संचयन द्वारा उसके निर्माण के साथ साथ हुई। पृथ्वी जिस सौर मण्डल का ग्रह है उसका निर्माण अंतरतारकीय अंतर धूल तथा गैस, जिसे सौर निहारिका कहा जाता है, के एक घूमते हुए बादल से हुआ, जो कि आकाशगांगा के केंद्र का चक्कर लगा रहा था। यह सौर मण्डल बिग बैंग 13.8 अरब साल पहले के कुछ ही समय बाद निर्मित हाइड्रोजन व हीलियम तथा बहुत तारों द्वारा उत्सर्जित भारी तत्वों से मिलकर बना था। लगभग 4.7 अरब साल पहले में, संभवत किसी निकटस्थ अभिनव तारे की आक्रामक लहर के कारण सौर निहारिका के सिकुड़ने की शुरुआत हुई थी। संभव है कि इस तरह की किसी आक्रामक तरंग के कारण ही निहारिका के घूमने व कोणीय आवेग प्राप्त करने की शुरुआत हुई हो। धीरे–धीरे जब बादल इसकी घूर्णन–गति को बढाता गया, तो गुरुत्वाकर्षण तथा निष्क्रियता के कारण यह एक सूक्ष्म–ग्रहीय चकरी के आकार में रूपांतरित हो गया, जो कि इसके घूर्णन के अक्ष के लंबवत थी। इसका अधिकांश भार इसके केंद्र में एकत्रित हो गया और गर्म होने लगा, लेकिन अन्य बड़े अवशेष के कोणीय आवेग तथा टकराव के कारण सूक्ष्म व्यतिक्रमों का निर्माण हुआ। महाविस्फोट प्रतिरूप के अनुसार यह ब्रहमाण्ड अति सघन और ऊष्म अवस्था से विस्तृत हुआ है और अब तक इसका विस्तार चालू है। एक सामान्य धारणा के अनुसार अंतरिक्ष स्वयं भी अपनी आकाशगंगाओं सहित विस्तृत होता जा रहा है। ब्रहमांड, जिसका पृथ्वी एक भाग है, का जन्म एक महाविस्फोट के परिणाम स्वरूप हुआ। इसी को महाविस्फोट सिद्धान्त या बिग बैंग सिद्धान्त कहते हैं। इसी सिद्धान्त के अनुसार लगभग बारह से चौदह अरब वर्ष पूर्व संपूर्ण ब्रहमांड एक परमाणुविक इकाई के रूप में था। उस समय रहित या कालातीत स्थान और स्थान जैसी कोई वस्तु अस्तित्व में नहीं थी। महाविस्फोट प्रतिरूप के अनुसार लगभग १३.७ अरब वर्ष पूर्व इस

धमाके में अत्यधिक ऊर्जा का उत्सर्जन हुआ। यह ऊर्जा इतनी अधिक थी जिसके प्रभाव से आज तक ब्रह्माण्ड फैलता ही जा रहा है। सारी भौतिक मान्यताएं इस एक ही घटना से परिभाषित होती हैं जिसे महाविस्फोट सिद्धांत कहा जाता है। महाविस्फोट नामक इस महाविस्फोट के धमाके के मात्र १.४३ सेकेंड अंतराल के बाद समय, अंतरिक्ष की वर्तमान मान्यताएं अस्तित्व में आ चुकी थीं। भौतिकी के नियम लागू होने लग गये थे। १.३४वें सेकेंड में ब्रम्हांड 1030 गुणा फैल चुका था और क्वार्क, लैप्टान और फोटोन का गरम द्रव्य बन चुका था। १.४ सेकेंड पर क्वार्क मिलकर प्रोटॉन और न्यूट्रॉन बनाने लगे और ब्रह्माण्ड अब कुछ ठंडा हो चुका था। हाइड्रोजन, हीलियम आदि के अस्तित्व का आरंभ होने लगा था और अन्य भौतिक तत्व बनने लगे थे। बीसवीं सदी के वैज्ञानिकों के अनुमान के अनुसार ब्रह्माण्ड 93 अरब प्रकाश वर्ष (एक वर्ष में प्रकाश जितनी दूर गमन करता है वह दूरी प्रकाश वर्ष कहलाती है) बड़ा है और यह तेजी से फैलता जा रहा है। इतने बड़े ब्रह्माण्ड में हमारी धरती कुछ वैसी ही है जैसे प्रशांत महासागर में पानी की एक बूंद। निहारिका या इन्टरस्टॅलर स्पेस में स्थित ऐसे अंतर्तारकी बादल को कहते हैं जिसमें धूल, गैस, हीलियम गैस और अन्य आयनीकृत (आयोनाइज़्ड) प्लाज़्मा गैसें मौजूद हों। पुराने ज़माने में खगोल में दिखने वाली किसी भी विस्तृत वस्तु को "नीहारिका" कहते थे। आकाशगंगा (गैलेक्सी) से परे किसी भी गैलेक्सी को निहारिका ही कहा जाता था। बाद में जब एडविन हबल के अनुसन्धान से यह ज्ञात हुआ कि यह गैलेक्सियाँ हैं, तो नाम बदल दिए गए। उदाहरण के लिए एंड्रोमेडा गैलेक्सी को पहले एण्ड्रोमेडा नॅब्युला या नीहारिका के नाम से जाना जाता था। पृथ्वी के इस पहले युग को हेडियन युग के नाम से जाना जाता है। यह आर्कियन युग तक जारी रहा है, जिसकी शुरुआत दुनिया में 3.8 साल पहले हुई, पृथ्वी पर आज तक मिली सबसे पुरानी चट्टान की आयु 4.0 अरब वर्ष मापी गई है, और कुछ चट्टानों में प्राचीनतम डेट्राइटल ज़िरकान कणों की आयु लगभग 4.4 अरब वर्ष आंकी गई है, जो कि पृथ्वी की सतह और स्वयं पृथ्वी की रचना के आस–पास का काल–खण्ड है। चूंकि उस काल की बहुत अधिक सामग्री सुरक्षित नहीं रखी गई है, अतः हेडियन काल के बारे में बहुत कम जानकारी प्राप्त है, लेकिन वैज्ञानिकों का अनुमान है कि लगभग 4.53 अरब वर्ष में प्रारंभिक सतह के निर्माण के शीघ्र बाद एक अधिक पुरातन ग्रह का पुरातन पृथ्वी पर प्रभाव पड़ा, जिसने इसके आवरण व सतह के एक भाग को अंतरिक्ष में उछाल दिया और चंद्रमा का जन्म हुआ। हेडियन युग के दौरान, पृथ्वी की सतह पर लगातार उल्कापात होता रहा और बड़ी मात्रा में ऊष्मा के प्रवाह तथा भू–ऊष्मीय अनुपात के कारण ज्वालामुखियों का विस्फोट भी भयंकर रहा होगा। डेट्राइटल ज़िरकान कण, जिसकी आयु 4.4 अरब वर्ष आंकी गई है, इस बात का प्रमाण प्रस्तुत करते हैं कि द्रव जल के साथ उनका संपर्क हुआ था, जिसे इस बात का प्रमाण माना जाता है कि उस समय इस ग्रह पर महासागर या समुद्र पहले से ही मौजूद थे। अन्य आकाशीय पिण्डों पर प्राप्त ज्वालामुखी–विवरों की गणना के आधार पर यह अनुमान लगाया गया है कि उल्का–पिण्डों के अत्याधिक प्रभाव वाला एक काल–खण्ड, जिसे लेट हेवी बॉम्बाडिमेन्ट अर्थात देर से भारी बमबारी कहा जाता है, का प्रारंभ लगभग 4.1 अरब वर्ष में हुआ था और इसकी समाप्ति हेडियन के अंत के साथ 3.8 अरब वर्ष के आस–पास हुई आर्कीयन युग के प्रारंभ तक, पृथ्वी पर्याप्त रूप से ठंडी हो चुकी थी। आर्कीयन युग के वातावरण, जिसमें ऑक्सीजन तथा ओज़ोन परत मौजूद नहीं थी, की रचना के कारण वर्तमान जीव–जंतु में से अधिकाश का अस्तित्व असंभव रहा होगा। इसके बावजूद, ऐसा माना जाता है कि आर्कीयन युग के प्रारंभिक काल में ही प्राथमिक जीवन की शुरुआत हो गई थी और कुछ संभावित जीवाष्म की आयु लगभग 3.5 अरब वर्ष आंकी की गई है। हालाकि, कुछ शोधकर्ताओं का अनुमान है कि जीवन की शुरुआत शायद प्रारंभिक हेडियन काल के दौरान, लगभग 4.4 अरब वर्ष पूर्व, हुई होगी और पृथ्वी की सतह के नीचे

जलतापीय छिद्रों में रहने के कारण संभावित विलम्बित बमबारी काल में उनका अस्तित्व बच सका । वैज्ञानिकों ने अपने शोध में अत्यधिक सूक्ष्मदर्शियों के प्रयोग से पाया कि कि ज्यादातर माइक्रोमेटेराइट्स (अंतरिक्ष की घूल) कभी लोहे की धातु के कण रहे हैं। ये वायुमण्डल की ऊपरी सतह में आयरन ऑक्साइड धातु में बदल गए थे, जो कि ऑक्सीजन की भरपूर मौजूदगी से ही संभव है। वैज्ञानिकों के अनुसार, प्राचीन पृथ्वी के ऊपरी वातावरण में ऑक्सीजन की मात्रा आज की तरह अधिक थी और मीथेन की परत ऑक्सीजन की कमी से ऑक्सीजन से भरी ऊपरी परत को अलग करती थी जैसे जैसे विज्ञान का विकास हुआ व जनसंख्या बढ़ी प्रकृति का आदमी ंद्वारा दोहन भी चालू हुआ हरे भरे पेड़ काटे गए, उद्योगों और मोटर वाहनों से निकलने वाली जहरीली गैसों जैसे कार्बन डाइऑक्साइड, कार्बन के अन्य आक्साइड, मेथेन गैस, सल्फरडाई ऑक्साइड, नाइट्रोजन ऑक्साइड जैसी घातक गैस से वातावरण में जहरीली गैस के प्रभाव से पृथ्वी प्रदूषित हुई। इस पर चिन्तन व शोध की आवश्यकता है।

अनुसंधान को समर्पित एक जीवन– डॉ. बिभा चौधरी (1913–1991)

सुमन रैना
आईआईटी रोपड़, पंजाब

ब्रह्मांडीय किरणों एवं कण भौतिकी विषय की शोधकर्ता डॉ. बिभा चौधरी बीसवीं सदी के भारत की अग्रणी महिला वैज्ञानिक थी। उच्च उर्जा भौतिकी में उत्कृष्ट अनुसंधान एंव योगदान के बावजूद वह न केवल जीवन पर्यंत बल्कि मृत्यु के बाद भी 30 वर्ष तक गुमनाम ही रही। 2018 में जर्मनी स्थित ओलडनवर्ग विश्वविद्यालय के विज्ञान इतिहासकार प्रोफेसर डॉ.राजेंद्र सिंह और कलकत्ता स्थित बोस इंस्टीट्यूट के पूर्व प्राध्यापक प्रो. सुप्रकाश सी राय की पुस्तक अ ज्वैल अनअरथडः डॉ बिभा चौधरी एक भारतीय महिला वैज्ञानिक की कहानी का जर्मन संस्करण प्रकाशित हुआ। लेखकों ने बताया कि भौतिकीविद् प्रो. डीएम बोस की जीवनी लिखते समय डॉ विभा द्वारा लिखे उच्च श्रेणी के शोधपत्र एवं आलेख मिले। उस समय के अनुसार उच्च ऊर्जा भौतिकी में कण भौतिकी एवं कॉस्मिक रेज विषयों पर यह अचंभित करने वाली उत्कृष्ट खोज थी। डॉ.बिभा की विज्ञान के प्रति रुचि,समर्पण एवं विषय की स्पष्टता और लग्न ने लेखकों को इतना प्रभावित किया कि उन्होंने डॉ बिभा की जीवनी लिखने का मन बना लिया । लेखकों ने महसूस किया कि डॉ.बिभा को अपने काम के लिए वह पहचान नहीं मिली है जिसकी वह हकदार है । यह सच ही है कि इमानदारी और मेहनत अपने आप खुद बोलते हैं, उन्हें किसी के सहारे या प्रचार की जरूरत नहीं पडती। इस पुस्तक के प्रकाशन के बाद 17 दिसंबर 2019 को इंटरनेशनल एस्ट्रोनॉमिकल यूनियन (आईएयू) ने सैक्सटांस तारामंडल में स्थित एक तारे (HD 86081)) का नाम डॉ. बिभा के सम्मान में 'बिभा' (जिसका शाब्दिक अर्थ है प्रकाश की किरण) रख दिया। यह तारा हमसे 340 प्रकाश वर्ष दूर है। डॉ विभा की मृत्यु के 30 वर्ष बाद ही सही, उन्हें उत्कृष्ट सम्मान मिला। इसकी स्मृति हमारे युवा वैज्ञानिकों को प्रोत्साहित करती रहेगी। मार्च 2020 में, महिला एवं बाल विकास मंत्रालय भारत सरकार ने प्रसिद्ध महिला वैज्ञानिकों के नाम पर 11 शोध पीठ की स्थापना की घोषणा की। भौतिकी की चेयर डॉ.बिभा के नाम से स्थापित की गई। यह कदम इस विषय के अनुसंधान कर्ताओं को संसाधनों एवं अन्य आवश्यक मदद पहुंचाने में उपयोगी सिद्ध होगा। वर्ष 2021 में टीआईएफआर की एल्यूमनी एसोसियेशन ने इसी पुस्तक का व्यापक एवं विस्तारित भारतीय संस्करण निकाला। इससे डॉ. बिभा के अनुसंधान एवं जीवन पर विस्तृत जानकारी उपलब्ध हुई है। डॉ. बिभा टीआईएफआर की पहली महिला भौतिकीविद् शोधकर्ता थी। संस्थान की ओर से अपनी पूर्व सदस्य के सम्मान में यह सच्ची श्रद्धांजलि है।

पश्चिम बंगाल के हुगली जिले के भंडारहाटी इलाके के एक जमींदार परिवार में सन् 1913 को बिभा का जन्म हुआ था। पिता बांकू बिहारी चौघरी पेशे से चिकित्सक थे। माँ उर्मिला देवी पर ब्रह्मो समाज के सिद्धांतों का बहुत प्रभाव था। ब्रह्मो समाज महिला शिक्षा और समाज सुधार की दिशा में काम कर रहा था। यह ब्रह्मो समाज

के सिद्धांतों का ही प्रभाव रहा होगा कि बिभा और उनकी चारों बहनों और भाई को पढाई करने का समुचित अवसर मिला। अपने विकास शील विचारों के कारण डॉ. बिभा के पिता को उनके परिवार ने पैतृक संपत्ति से बेदखल कर दिया, लेकिन चौधरी दम्पत्ति ने बच्चों की शिक्षा पूर्ववत ही जारी रखी। बिभा की आरम्भिक शिक्षा देश के प्राचीनतम स्कूलों में से एक बैथ्यून स्कूल से हुई थी। स्कॉटिश चर्च कॉलेज से उन्होंने भौतिकी मे बी.एस.सी. की डिग्री और कलकत्ता विश्वविद्यालय से भौतिकी में ही एम.एस.सी. की उपाधि वर्ष 1936 मे प्राप्त की। 24 छात्रों की कक्षा में वह अकेली महिला विद्यार्थी थी। 1936 में ही बिभा ने भौतिकीविद प्रो. देवेंद्र मोहन के मार्गदर्शन में शोध कार्य करना आरंभ कर दिया। 1938 में जब डीएम बोस ने निदेशक के तौर पर कार्यभार संभाला तभी उनके अन्य शोधकर्ताओं के साथ बिभा भी बोस इंस्टीट्यूट चली गई। वह 1939 से 1942 तक वहां शोधरत रहीं। बोस इंस्टीट्यूट मे अपने कार्य काल के दौरान बिभा ने प्रो. बोस के साथ मिलकर फोटोग्राफिक प्लेट्स का इस्तेमाल करके मेसॉनज की खोज में महत्वपूर्ण योगदान दिया। इस खोज के आधार पर उन्होंने लगातार तीन शोधपत्र 'नेचर' नामक जर्नल में प्रकाशित किये। यह दूसरे विश्व युद्ध का समय था। उन्हे अधिक उन्नत और संवेदनशील प्लेटस उपलब्ध न होने के कारण अपना शोध बीच में ही छोडना पड़ा। भाग्य की विडंबना देखिए कि इसके सात वर्ष बाद इसी विधि से खोज करने पर सीएफ पावेल को पायोन और म्यूओनज पर अनुसंधान के लिए नोबल पुरस्कार मिला। काम रूकने से बिभा ने अपना इरादा न बदला और अपनी पीएच.डी. के लिए मैनचेस्टर विश्वविद्यालय में प्रवेश ले लिया। यहां बिभा पीएमएस ब्लैक्ट की ब्रह्मांडीय किरण (cosmic rays) से संबधित प्रयोगशाला से जुड गई। यहां बिभा ने 'एक्सटेंसिव एआर शॉवरज इन कॉस्मिक रेज' विषय पर शोध शुरू कर दिया। 1949 के आरंभ में ही बिभा ने 'एक्सटेंसिव एआर शावरज विद पेनिट्रेटिंग पार्टिकलज', विषय पर अपना शोध प्रबंध प्रस्तुत कर दिया था लेकिन कुछ गैर शैक्षणिक कारणों के चलते उन्हे डिग्री 1952 में मिली। बिभा के दोनों परीक्षकों लॉजोस जैनोसी एवं जॉन जी विलसन का मानना है कि उन्होंने मार्च 1949 में अपने थीसिस को सफलतापूर्वक डिफेंड किया। डिग्री मिलने में देरी का कारण थीसिज से संबधित कदापि न था। इसी दौरान ब्लैकट को 1948 में भौतिकी के नोबल पुरस्कार से नवाजा गया। ब्लैक्ट नव स्वतंत्र भारत में उच्च वैज्ञानिक अनुसंधान की शुरूआत करने से संबंधित मामलों के लिए तत्कालिक प्रधानमंत्री पं. नेहरू के सलाहकार थे। पी.एच.डी. का काम खत्म करते ही बिभा पैरिस में छः माह के लिए प्रो. लुईस लैपरिएंस रिंगेट की प्रयोगशाला में काम करने की इच्छुक थी जिसके लिए उन्हे आर्थिक मदद की जरूरत थी। इस प्रयोगशाला में फोटोग्राफिक एमलशन प्लेटस टैकनिक्स पर काम हो रहा था। यही काम बिभा बोस इंस्टीट्यूट में कर रही थी। लेकिन उन्हे आर्थिक मदद न मिल पाई क्योंकि उनका पीएचडी का काम एकसटेंसिव एअर शॉवरज पर था।

भारत में उस समय टाटा इंस्टीट्यूट ऑफ फंडामैंटल रिसर्च (टीआईएफआर) की स्थापना हुई ही थी। डॉ. होमी जहॉंगीर भाभा स्वयं भी ब्रह्मांडीय किरणों पर शोघ कर रहे थे। उन्हे अपने संस्थान के लिए युवा वैज्ञानिकों की तलाश थी। जॉन जी विलसन की अनुशंसा, समुचित साक्षात्कार एंव डॉ भाभा के निमंत्रण पर बिभा 1949 में टीआईएफआर की पहली महिला शोधकर्ता के रूप में संस्थान से जुड गईं और 1957 तक यहां रही। यहां बिभा ने 'क्लाउड चैंबर' के विकास एवं अनुसंधान मे योगदान दिया। 1955 में बिभा ने संस्थान के अन्य सहयोगियों के साथ पीसा इटली मे मूल अणुओं विषय पर आयोजित अंतर्राष्ट्रीय सम्मेलन में भाग लिया। प्रो.एमजीके मेनन, प्रो. बी पीटरज, प्रो एस बिसवास, डॉ अप्पा राव और प्रो गुरंग योध, बिभा के समकालीन थे और इस समूह के प्रयासों से संस्थान में कॉस्मिक रेज एक्टिविटी को बहुत बढावा मिला। विभिन्न तरह के, 'के मेसॉनज' की खोज हुई। इसी समय डी लाल एवं यशपाल शोधार्थियों के स्तर पर इस समूह में शामिल

हुए। डॉ. बिभा इस समय उपकरणो के प्रबंधन एंव प्रयोग संबन्धित कार्य मे व्यस्त रही। यह अजीब संयोग रहा कि यहां टीआईएफआर आने से पूर्व उन्होंने 10 शोधपत्र विदेशी जर्नलों में प्रकाशित किए थे और 15 से अधिक लेख टीआईएफआर छोडने के बाद भारतीय जर्नलों के लिए लिखे। सन् 1956 में बिभा कुछ समय के लिए फ्रांस और 1957 में मिशिगन स्टेट यूनिवर्सिटी (यूएसए) मे शोधकार्यरत थी। 1959 में बिभा ने कोडाईकेनाल में एक सीएसआईआर परियोजना में कार्य किया। 1961 में बिभा पीआरएल अहमदाबाद के साथ पूल ऑफिसर के रूप में जुड गईं। इसी संस्थान मे वह 1966–67 में रिसर्च फैलो रही। यहां वह प्रसिद्ध कोलार गोल्ड फिल्ड एक्सपेरिमेंट का हिस्सा थी। उन्होंने स्मॉल स्केल एक्सटेंसिव एअर शॉवरज प्रयोग में 700 फुट की गहराई पर डिटैक्टर स्थापित कर प्रयोग किया। इस प्रयोग के बाद बिभा की मांउट आबू में एक्सटेंसिव एअर शावर से संबधित रेडियो फ्रिक्वेंसी इमिशन पर काम करने की योजना थी। इस योजना के बारे में उन्होंन प्रो. विक्रम ए साराभाई से विस्तृत चर्चा कर ली थी। दुर्भाग्यवश प्रो साराभाई के आकस्मिक निधन के पश्चात पीआरएल में शोध की दिशा बदल गई और बिभा को अपने नए प्रयोग की स्वीकृति नहीं मिली। तत्पश्चात बिभा ने ऐच्छिक सेवानिवृत्ति ले ली और वह कोलकाता वापिस चली आई। यहां पर उन्होनें 'साहा इंस्टीट्यूट ऑफ न्यक्लियर फिजिक्स' में उच्च उर्जा भौतिक पर शोध जारी रखा। इसके अतरिक्त वह 'द इंडियन एसोसिएशन फार द कल्टिवेशन ऑफ साइंस' और 'वीइसीसी' संस्थान से जुडी रही। इसी दौरान वह 1983 में आयोजित तीसरी एसएसएनटीडी नेशनल कॉफ्रेंस में भाग लेने अमृतसर भी आई। जून 1991 में अपनी मृत्यु से कुछ माह पहले 'इंडियन जर्नल ऑफ फिजिक्स 'में उनका अंतिम शोधपत्र प्रकाशित हुआ। वह न किसी सम्मान की होड मे शामिल थी, न ही उन्होंने किसी पुरस्कार या पद की लालसा को लेकर काम किया। भौतिकी एवं अनुसंधान का जुनून था। जीवन पर्यन्त प्रयोगशाला में काम करती रही और एक शोधकर्ता के रूप में लिखती रही। वह एक ऐसी महिला थी जो वैज्ञानिक बनने के लिए ही जन्मी थी।

बिभा के व्यक्तिगत जीवन के बारे में बहुत कम जानकारी उपलब्ध है। वह और उनके सभी भाई बहन अविवाहित रहे इसलिए अगली पीढी में उनके या परिवार के बारे मे बताने वाला कोई नहीं है। उनके सहकर्मियों, उनके मार्गदर्शन में काम करने वाले विद्यार्थियों और उनके एक साक्षात्कार से उनके व्यक्तित्व और उनके विचारों की थोडी सी झलक मिलती है। उनके सहयोगी उन्हें सादगी पसंद, सहज और हमेशा मदद के लिए उपलब्ध एवं खुशनुमा इन्सान के रूप में याद करते हैं। उनके मैनचेस्टर आवास के दौरान वहां स्थित एक समाचार पत्र 'द मैनचेस्टर हैराल्ड' ने एक रिपोर्ट 'मीट द इंडियाज न्यू वूमन साइंटिस्ट – शी हैज एन आई फॉर कॉस्मिक रेज' प्रकाशित की जो उनसे की गई बातचीत पर आघारित है। लेखक ब्रिगेट मैक्सवैल द्वारा पूछे गये प्रश्न के जवाब में बिभा के शब्द थे "समस्या यही है कि महिलाएं फिजिक्स से डरती हैं। यह खेदजनक है कि आज भौतिकी के क्षेत्र में बहुत कम महिलायें हैं। आज के युग में विज्ञान और विशेषकर भौतिकी का महत्व पहले से कहीं अधिक बढ़ गया है। महिलाओं को एटॉमिक पावर के बारे में पढ़ना चाहिए। अगर वह यह ही नहीं जानती कि एटॉमिक शक्ति किस तरह काम करती है तो वह इस बारे में क्या राय दे सकेंगी कि इसका उपयोग किस तरह किया जाना चाहिए।'' हमें याद रखना है कि जिस समय बिभा यह बात कह रही है वह दूसरे विश्वयुद्ध का समय था। उनके कथन से स्पष्ट है कि वह परमाणु ताकत के दुरुपयोग से सचेत करना चाहती थी और महिलाओं से इसमे प्रभावशाली भूमिका निभाने का आग्रह करती दिखती थी। वह आगे कहती हैं "मैं भारत और इंग्लैंड में भौतिकीविद् महिलाओं को जानती हूँ, इनकी संख्या इतनी कम है कि एक हाथ की अंगुलियों पर गिना जा सकता है। स्कूल मे विज्ञान में रूचि रखने वाली लडकियाँ अकसर कैमिस्ट्री को चुन लेती हैं क्योंकि फिजिक्स के लिए गणित पर अच्छी पकड़ होना जरूरी

है।" लेखक लिखता है कि बिभा को गणित से कोई परेशानी नहीं हुई उनके लिए यह विषय इतना सहज था जैसे कि बत्तख के लिए पानी। मैक्सवैल ने माना कि बिभा ने उसे अपने शोध विषय के बारे में इतनी सरलता और स्पष्टता से समझाया कि उसे भी एटॉमिक फिजिक्स के इस गहन विषय मे रूचि पैदा हो गई। जब बिभा से पूछा गया कि अपने प्रयोग के दौरान उन्होंने कितने चित्र खींचें हैं तो जवाब मिला "वस्तुतः हजारों हजार।" उन्होंने पत्रकार को बताया कि वह अपनी डिग्री पूरी करने के पश्चात भारत जाकर अपना शोधकार्य करना चाहती हैं। लेखक का मानना है कि बिभा के मन में भारतीय महिलाओं को शिक्षा के लिए विशेषकर वैज्ञानिक उच्च शिक्षा के लिए प्रेरित करने की गहन इच्छा थी।

प्लाजमा भौतिकीविद प्रो. योगेश सी सक्सेना जिन्हें डॉ. बिभा चौधरी के मार्गदर्शन में काम करने का अवसर मिला अपने विचार इस तरह प्रकट करते हैं। "डॉ बिभा ने हमें 'इंटरैक्शन ऑफ हाई एनर्जी पार्टिकल एंड मैटर' नामक कोर्स पढाया, विषय पर उनकी पकड़ से मैं बहुत प्रभावित हुआ और मैने उन्ही के ब्रह्मांडीय किरणों से संबधित विषय में उनके साथ शोध करने का निर्णय ले लिया। वह समर्पित अध्यापिका, सहयोग के लिए तत्पर अनुसंधानकर्ता एंव बेहतर इंसान थी। उन्होंने मुझे भौतिकी के अतरिक्त फ्रैंच भी पढाई जो मेरे विश्वविद्यालय की ओर से पी.एच.डी. कार्यक्रम का अनिवार्य हिस्सा था ।

इसरो के पूर्व अध्यक्ष डॉ. के कस्तूरीरंगन ने वर्ष 1963 में पीआरएल में स्नातक छात्र के रूप में प्रवेश लिया। वह डॉ बिभा को याद करते हुए बताते हैं कि वह अत्यंत संजीदा अध्यापिका थी जो न्यूक्लियर फिजिक्स और कॉस्मिक रेज पर अपने व्याख्यान बहुत सतर्कता से तैयार करती लेकिन उनका प्रतिपादन सहज और सरल होता। वह मानते हैं कि यह परम सौभाग्य कि बात है कि वह डॉ बिभा के छात्र रहें है। "वह सभी छात्रों का बहुत ख्याल रखती और उनके संशय दूर करने की हर संभव कोशिश करती। उनका गृह कार्य लीक से हट कर होता और छात्रों को विषय की मूल जानकारी हासिल करने और मौलिक चिंतन के लिए के लिए प्रेरित करता। उनके अध्यापन और संरक्षण ने मुझे विभिन्न विषयों के सिद्धांतों का प्रयोग करके समस्याओं के मौलिक निवारण के लिए तैयार किया। मैं उन्हे सादर एवं कृतज्ञता के साथ याद करता हूं"।

बोस इंस्टीट्यूट कलकत्ता के पूर्व निदेशक प्रो. एससी भटाचार्य को जीवन पर्यंत यह खेद रहा कि डॉ. बिभा को भारतीय वैज्ञानिक बिरादरी में वह स्थान नहीं मिला जिसकी वह हकदार थी। अकसर उनकी भावपूर्ण टिप्पणी होती थी कि "डीएम बोस को चाहिए था कि वह मेरे स्थान पर बिभा दी को बोस इंस्टीट्यूट का निदेशक बनाते।"

बीसवीं सदी के भारत में किसी महिला का भौतिकी जैसे विषय में पीएचडी करना और जीवन भर अपने शोध को निरंतर जारी रखना डॉ बिभा के दृढ़ निश्चय एवं अपने विषय के प्रति लग्न को दर्शाता है। देश और विदेशों में महान भौतिकीविदों और विख्यात प्रयोगशालाओं मे काम करने बावजूद किसी भी तरह के मान –सम्मान से अलग रही। बिभा ने अपने भौतिकी के प्रति लगाव को कभी कम न होने दिया। उनके जीवन की कहानी बताती है कि कोई भी मेहनत निष्फल नहीं जाती और सच हमेशा विजयी होता है और आगे आनेवाली पीढियों का मार्दर्शन करता है।

नोटः इस लेख की अधिकांश जानकारी 'ए ज्वैल अनअर्थडः बिभा चौधरी, द स्टोरी ऑफ एन इंडियन वुमन साईंटिस्ट' नामक पुस्तक से साभार ली गई है। पुस्तक मे उनके शोधपत्रो, शोधप्रबंध एवं अनुसंधान से संबंधित विस्तृत जानकारियां उपलब्ध हैं। इच्छुक पाठक गण मूल पुस्तक से यह सब जान सकते हैं। इस लेख का उदेश्य सभी विषयों के पाठकों तक इस उत्कृष्ट भौतिकीविद की जानकारी राष्ट्रभाषा हिंदी में पहुंचाना है। प्रकाशन के लिए चित्र इंटरनेट से लिया गया है। इस लेख की संरचना, शैली और भाव मौलिक हैं।

उत्तराखंड में बढ़ता मानव वन्य जीव संघर्षः एक चुनौती

आशीष कुमार आर्य और डॉ. अर्चना बचेती
ग्राफिक एरा विश्वविद्यालय, देहरादून

उत्तराखंड में मानव–वन्य जीव संघर्ष चिंताजनक स्थिति में पहुंच चुका है। राज्य गठन से अब तक 600 से ज्यादा लोग वन्य जीवों के हमले में जान गंवा चुके हैं, जबकि 1200 से अधिक जख्मी हो चुके हैं। पहाड़ तो छोड़िए शहर भी वन्य जीवों के आतंक से मुक्त नहीं हैं। अल्मोड़ा में बार–बार गुलदार घुसने की घटनाएं किसी को चौंकाती नहीं हैं तो राजधानी देहरादून के आसपास हाथियों का आतंक और ऋषिकेश क्षेत्र में गुलदार की धमक आम हो चुकी है। प्रदेश में जिस तेजी से वन्य जीव आबादी वाले इलाकों का रुख कर रहे हैं उसे देखकर लगता नहीं कि इस संघर्ष पर विराम लगेगा। जाहिर है गंभीर होते हालात में जन आक्रोश बढ़ता जा रहा है। यह लोगों का गुस्सा ही था कि कोटद्वार के घामधार क्षेत्र में पिंजरे में फंसे गुलदार को जिंदा जला दिया तो जौनसार क्षेत्र में बिल्ली परिवार के इस सदस्य को कुल्हाड़ी से काट डाला गया। इतना ही नहीं रुद्रप्रयाग में खेत में काम रही एक महिला पर गुलदार ने हमला किया तो इस वीर नारी ने आत्म रक्षा में गुलदार को मौत की नींद सुला दिया। हालांकि इस संघर्ष में वह बुरी तरह जख्मी हो गयी। दरअसल, संघर्ष की मूल वजह तो सर्वविदित है। सिमटते जंगल, प्रवास स्थल व भोजन की कमी और जंगलों में बढ़ते मानवीय हस्तक्षेप से यह नौबत आयी है। हाथियों के पारंपरिक गलियारे तकरीबन समाप्त हो चुके हैं। जंगल से सटे खेत वन्य जीवों को आकर्षित करते हैं। उस पर तुर्रा यह है कि जंगल के बीच अक्सर पिकनिक मनाने गए पर्यटक वन्य जीवों की दिनचर्या में खलल डालने से बाज नहीं आते। इससे वन्य जीवों के व्यवहार में भी परिवर्तन आ रहा है। हैरत यह है कि विभाग सब कुछ जानते हुए भी सक्रिय नजर नहीं आता। वन विभाग ने कुछ स्थानों पर आबादी के पास वाले क्षेत्रों में फेंसिंग कराई, लेकिन देखरेख के अभाव में यह तारबाड़ जगह–जगह क्षतिग्रस्त हो चुकी है। पहाड़ी क्षेत्रों में तो यह भी संभव नहीं कि तारबाड़ की जाए, जबकि सर्वाधिक प्रभावित इलाके पहाड़ ही हैं। जाहिर है भूगोल से तारतम्य बैठाते हुए नीति नियंताओं को इस समस्या का समाधान तलाशना होगा। आखिर पारिस्थितिकीय तंत्र को बचाने के लिए वन्य जीवों को बचाना दायित्व है तो इंसान की जिंदगी भी मूल्यवान है। इसमें कोई दो राय नहीं कि यदि अब न संभले तो आने वाला समय और भयावह होगा। तब स्थितियां नियंत्रण से बाहर हो चुकी होंगी।

यह वन्यजीवों के लिए संकट का दौर है। वे वन्यजीव, जिनकी हमारे पारिस्थितिकी तंत्र में अहम भूमिका है, वे कहीं सौंदर्य प्रसाधनों, सजावट के सामान, यौनवर्द्धक दवाइयों, अंगों के व्यापार के लिए, तो कहीं अपने आश्रय–स्थल जंगलों के खत्म होने के चलते भोजन की तलाश में मानव आबादी में घुसने के अपराध में मारे जा रहे हैं। वन्यजीव तस्करों द्वारा बाघों, हाथियों, गैंडों, बारहसिंघा, हिरनों आदि की उनके अंगों के व्यापार की खातिर शिकार की घटनाएं तो जगजाहिर हैं, लेकिन बीते कुछ बरसों में वन्यजीवों के मानव आबादी में घुसने पर हत्या आम हो चली है।

देश के लगभग हर कोने से रिहायशी इलाकों में तेंदुआ के आ जाने, कभी इसके खुद मुश्किल में फंस जाने, तो कभी बड़ी आबादी के लिए मुश्किल बन जाने की खबरें आईं। महाराष्ट्र में आबादी में घुसा तेंदुआ शोर मचने पर कुएं में गिर पड़ा, तो राजाजी टाइगर रिजर्व के पास एक गुलदार और हरियाणा में आबादी में घुसे तेंदुए ने कई लोगों को घायल कर दिया। गुस्साए ग्रामीणों ने लाठियों से पीट–पीटकर उसे मार डाला। उत्तर प्रदेश

के तराई इलाकों में बार–बार तेंदुआ दिखने, किसी को घायल करने, तो किसी की जान लेने की खबरें आती रही। सरिस्का में तेंदुए ने एक युवक की जान ले ली, तो नाराज ग्रामीणों ने उसे घेरा और जिंदा जलाकर मार डाला। राजधानी दिल्ली में बीते साल नवंबर में यमुना डायवर्सिटी पार्क में एक तेंदुआ देखा गया। असम में एक रॉयल बंगाल टाइगर मारा गया, तो तीन हाथी रेल से कट गए। इनके मारे जाने, ट्रेन से कटने, बाढ़ में बह जाने की बातें आम हैं, लेकिन इसके लिए होता कुछ नहीं। न जंगल के बीच से पटरियां हटीं, न बाढ़ से बचाने का कोई इंतजाम हुआ। उत्तराखंड में भी यह समस्या आम है। जहां तक नागरिकों द्वारा वन्यजीवों को मारे जाने का सवाल है, तो ऐसी घटनाएं जनमानस में व्याप्त असुरक्षा बोध का नतीजा होती हैं। लेकिन काजीरंगा आदि पार्कों की घटनाएं प्रशासनिक उदासीनता का परिचायक हैं। दुर्भाग्यपूर्ण तथ्य यह है कि इसे देखने का सरकारों के पास समय ही नही है।

वैश्विक स्तर पर भी देखें, आंकड़े बताते हैं कि धरती की क्षमता अब चुकती जा रही है। मानवीय गतिविधियों का दबाव, अंधाधुंध उपभोग की बढ़ती प्रवृत्ति और बेतहाशा बढ़ती आबादी से धरती जहां सहने की शक्ति खो चुकी है, वहीं वन्य जीवों का अस्तित्व खतरे में पड़ चुका है। कई प्रजातियां लुप्त हो चुकी हैं और सैकड़ों–हजारों की तादाद विलुप्ति के कगार पर हैं। विश्व वन्य जीव संगठन की 'लिविंग प्लेनेट' नामक रिपोर्ट की मानें, तो धरती पर उसकी क्षमता से ज्यादा बोझ है। यह बोझ इतनी तेजी से बढ़ रहा है कि 2030 तक हमारी जरूरतें पूरी करने के लिए धरती जैसे एक ग्रह की और जरूरत पड़ेगी। इससे आगे के 20 बरसों के बाद यानी 2050 तक धरती के अलावा दो और ग्रहों की जरूरत होगी। यह जरूरत जीवन स्तर में सुधार के साथ दिनोंदिन बढ़ती जाएगी। वर्ल्ड वाइल्ड लाइफ फाउंडेशन और लंदन के अजायबघर की रिपोर्ट के अनुसार, 1970 के बाद जीवों की संख्या में 30 फीसदी से अधिक की कमी आई है। बाघ सहित करीब 2500 से भी ज्यादा प्रजातियां संकट में हैं। आकलन बताते हैं कि अभी यह संकट और बढ़ेगा।

वन्यजीवों का शहरी आबादी की ओर आने, उन पर बढ़ते जानलेवा हमले की तेजी से बढ़ती घटनाएं और उनकी दिनोंदिन तेजी से घटती तादाद का सबसे बड़ा कारण दरअसल विकास के नाम पर बिना सोची–समझी योजनाएं थोप दिया जाना है। इससे वन्यजीवों के क्षेत्र पर अतिक्रमण तो हुआ ही, उनके आहार पर भी संकट आया। शिकार और पानी की तलाश में भटककर वे मानव आबादी में आने लगे और उनकी जान जोखिम में पड़ती गई।

उत्तराखंड में बाघ और हाथी गणना के नतीजे सुकून देने वाले रहे हैं। बाघों के बाद अब राष्ट्रीय विरासत पशु हाथी का कुनबा भी बढ़ा है। बाघों की तादाद बढ़कर 361 हो गई है तो हाथियों की संख्या 1839। यह इस बात का द्योतक है कि जैव विविधता के लिए मशहूर यह राज्य वन्यजीवों के संरक्षण में पूरी संजीदगी से जुटा हुआ है। बावजूद इसके अब चुनौतियों में भी खासा इजाफा हो गया है। सबसे बड़ी चुनौती इन वन्यजीवों के वासस्थलों की है। जिस हिसाब से इनकी संख्या बढ़ी है, उसी अनुपात में जंगल में उनके लिए भोजन का इंतजाम भी होना चाहिए। राज्य में बाघों की प्रमुख सैरगाह कार्बेट टाइगर रिजर्व के साथ ही राजाजी टाइगर रिजर्व से निकलकर ये दूसरे क्षेत्रों का रुख करेंगे। इसकी वजह इलाके के लिए होने वाले संघर्ष माना जा सकता है। जो कमजोर होगा, वही दूसरे इलाकों की ओर रुख करेगा। ऐसे में यदि इन्हें दूसरे क्षेत्रों में संरक्षित क्षेत्रों की भांति वासस्थल नहीं मिला तो दिक्कतें बढ़ सकती हैं। हालांकि, कार्बेट और राजाजी के मध्य स्थित लैंसडौन वन प्रभाग बाघों के नए घर के रूप में स्थापित हो रहा है, लेकिन अन्य क्षेत्रों में भी इस प्रकार के प्रयासों की दरकार है। यही नहीं, हाथियों की बात करें तो उनके स्वच्छंद विचरण के रास्ते खुले होने जरूरी हैं। यानी वे एक से दूसरे जंगल में आसानी से आ सकें। वजह यह कि लंबी प्रवास यात्राएं हाथियों के स्वभाव का हिस्सा है। फिर यह जंगलों की सेहत के साथ ही हाथियों की अच्छी संतति

के लिए जरूरी भी है लेकिन चिंता इस बात की है कि हाथियों की आवाजाही के रास्ते जगह–जगह बाधित हैं। वन विभाग के अभिलेख ही बताते हैं कि एक दौर में यहां से हाथी बिहार तक विचरण करते थे। अब हाल ये है कि ये राज्य में करीब छह हजार वर्ग किमी के दायरे में फैले क्षेत्र में आने–जाने में भी मुश्किलों से दो–चार हो रहे हैं। असल में इनके आवाजाही के परंपरागत रास्तों (गलियारों) में कहीं मानव बस्तियों ने अतिक्रमण किया हुआ है तो कहीं सड़क व रेल मार्गों के साथ ही अन्य परियोजनाओं ने बाधाएं खड़ी की हुई हैं। सूरतेहाल बताता है कि विकास और जंगल के मध्य बेहतर सामंजस्य की कमी कहीं न कहीं अखर रही है। इसका खामियाजा वन्यजीवों को भुगतना पड़ रहा है। लिहाजा, वासस्थल विकास और बंद पड़े गलियारों को खोलना समय की मांग है।

वन्यजीवन पर एक खतरा जलवायु परिवर्तन ने भी डाला है। आशंका है कि आने वाले समय में जलवायु परिवर्तन का सबसे ज्यादा प्रभाव हिमालय क्षेत्र के जंगलों पर पड़ेगा। वन्यजीवों की सुरक्षा के लिए बनी योजनाओं का ढिंढोरा पीटने से कुछ नहीं होने वाला। वन्यजीवों के प्रति जनमानस की सोच को बदलना भी बेहद जरूरी है। सोचना होगा कि इनके बिना हमारी जिंदगी भी कहीं अधूरी तो नहीं हो जाएगी।

राजाजी टाइगर रिजर्व में कुख्यात बावरिया गिरोह की दस्तक से उत्तराखंड में वन्यजीवों की सुरक्षा का सवाल फिर से चर्चा के केंद्र में है। हालांकि, रिजर्व प्रशासन ने हाई अलर्ट जारी किया है और निगहबानी मजबूत करने का दावा भी है, लेकिन सवालों की फेहरिस्त कम होने का नाम नहीं ले रही। यह किसी से छिपा नहीं है कि छह राष्ट्रीय उद्यान, सात वन्यजीव विहार और चार संरक्षण आरक्षिति (कंजर्वेशन रिजर्व) में मौजूद बाघ, गुलदार, हाथी समेत दूसरे वन्यजीव उत्तराखंड को वैशिष्ट्य प्रदान करते हैं। खासकर बाघों के संरक्षण के मामले में विश्व प्रसिद्ध कार्बेट नेशनल पार्क देशभर में अव्वल है। बाघों की संख्या के लिहाज से उत्तराखंड को देश में दूसरा स्थान हासिल है। जिस हिसाब से यहां बाघों की संख्या में इजाफा हो रहा है, उससे लगता है कि उत्तराखंड को इसमें सिरमौर होते देर नहीं लगेगी। ऐसे में सबसे बड़ी चुनौती वन्यजीवों की सुरक्षा को लेकर है। वह भी खासकर कुख्यात बावरिया गिरोहों से, जो वन्यजीव महकमे के दावों को धता बताते हुए संरक्षित क्षेत्रों में घुसकर शिकार की घटनाओं को अंजाम देते आए हैं। फिर चाहे कार्बेट नेशनल पार्क हो अथवा राजाजी नेशनल पार्क या दूसरे संरक्षित क्षेत्र व वन प्रभाग, सभी इन गिरोहों के निशाने पर हैं। अंदाजा इसी से लगा सकते हैं कि सूबे में वन्यजीवों के शिकार की 80 फीसद घटनाओं में अब तक बावरिया गिरोहों का नाम ही सामने आया है। यही नहीं, इन गिरोहों के तार सीमा पार बैठे माफिया से भी जुड़े हैं। बावजूद इसके बावरिया चुनौती से महकमा अब तक पार नहीं पा सका है। वह भी तब जबकि, राज्य में पांच बावरिया गिरोह चिह्नित किए जा चुके हैं और वर्तमान में इनके 88 सदस्य सक्रिय हैं। यही नहीं, वाइल्ड लाइफ क्राइम कंट्रोल ब्यूरो की पहल पर देश के सभी राज्यों में सक्रिय वन्यजीव अपराधियों से संबंधित सूचनाओं का आदान–प्रदान भी किया जा रहा है। फिर भी इन गिरोहों पर नकेल कसने की दिशा में ठोस एवं प्रभावी पहल अब तक नहीं हो पाई है। साफ है कि सिस्टम में कहीं न कहीं खामी है, जिसे दूर करने की आवश्यकता है। मसलन, संरक्षित क्षेत्रों में गश्त को गंभीरता से लिया जाना चाहिए और कार्मिकों की संख्या में इजाफा करने के साथ ही उन्हें आधुनिक हथियारों से भी लैस करना होगा। सबसे बड़ी जरूरत खुफिया तंत्र को सशक्त बनाने की है। उम्मीद की जानी चाहिए कि राज्य सरकार वन्यजीवों की सुरक्षा के मद्देनजर ठोस पहल कर इसे धरातल पर उतारेगी।

इतिहास : एक सेतु

शुभ्रा बैनर्जी
धनपुरी शहडौल (म.प्र.)

मानव सभ्यता का प्रमाण हमें सिंधु घाटी सभ्यता, हड़प्पा और मोहनजोदड़ों से मिलता हैं। प्राचीन काल से ही जीवन को विभिन्न युगों में विभाजित किया गया हैं। आवश्यकताओं ने मानव को स्वतः ही विकास की तरफ अग्रसर किया है। विवेकशील मस्तिष्क ने परिस्थितियों के अनुसार अनायास ही अनुसंधान व अविष्कार किए हैं। ईश्वर ने प्रत्येक प्राणी को अनुकूल व प्रतिकूल परिस्थितियों में जीवित रहने की बौद्धिक, मानसिक व शारीरिक क्षमता प्रदान की है। धरती पर जीवन की सत्यता के प्रमाण ईसा पूर्व से हैं। ये प्रमाण तथाकथित रूप से संग्रहित किए गए हैं। जब मनुष्य को 'शब्दों अक्षर का ज्ञान नहीं था तब सांकेतिक विधि से ताम्र–पत्रों, शिलालेखों, मंदिरों, मुद्राओं में प्रमाण संकलित किए जाते थे।

आधुनिक युग में यदि हम विज्ञान और धर्म की बात करें तो यह कहना अतिशयोक्ति नहीं है कि इतिहास वह सेतु है जो विज्ञान और धर्म को परस्पर जोड़ता है। जहां विज्ञान का संबंध प्रमाण से है वहीं धर्म का संबंध आस्था से है। उदाहरण के तौर पर वैज्ञानिक अनुसंधान में यह प्रमाणित हो चुका है कि गंगा नदी का जल पूर्णतया शुद्ध हैं। और धार्मिक कथा के अनुसार गंगा स्पर्श की नदी है, जिसे ऋषि भागीरथ ने धरती पर तपस्या करके बुलाया। यह हमारी आस्था है कि हम गंगा जल अपने घर पर पूजा के स्थान पर रखते हैं। वर्षों तक एक छोटे से पात्र में स्थिर रहकर भी यह जल बैक्टीरिया मुक्त रहता है।

हमारा बौद्धिक विकास हमें तार्किक रूप से तो सशक्त करता है परंतु हमारी आस्था के प्रमाण अतीत की कालजयी कर्मभूमि हैं। बर्फानी बाबा का उद्‌गम अमरनाथ की गुफा में, श्री विष्णु के विभिन्न अवतार, शिव का मां सती की मृत देह को लेकर तांडव, मां दुर्गा का शक्ति स्वरूप, महाभारत का रण हो या श्रीराम का प्रण। ये सभी तथ्य अतीत में होने वाली घटनाओं का विवरण हैं। जो इतिहास हैं। श्री कृष्ण की राजधानी द्वारिका नगरी, गांधारी के अभिशाप से समुद्र में समाहित हो गई थी। इसका वर्णन इतिहास के रूप में पुराणों में लिखित है और विज्ञान में नासा की तस्वीरों से इस घटना का प्रत्यक्ष प्रमाण भी दिया। जिसे हम कहते हैं हेन्स प्रूव्ड। ऐसी लाखों कराड़ों पौराणिक कथाऐं, भारत के राजाओं की शूर–वीरता की गाथाऐं, स्वतंत्रता सेनानियों की शहादत ना केवल लिखकर संग्रहित की गई हैं बल्कि उनका प्रमाण आज भी जीवित हैं। महाभारत के परिदृश्य में एक बहुत ही रोचक इतिहास है– घृतराष्ट्र के सौ पुत्रों का जन्म। गांधारी के गर्भ में तो एक ही भ्रूण था जिसे ऋषि ने सौ घड़ों में समान रूप से विभाजित करके स्थापित किया था। भ्रूणों के विकास के लिए नैसर्गिक पद्वति का प्रयोग करके सौ पुत्रों का जन्म संभव हो पाया। यही पद्वति कालक्रम में IVF या टेस्ट ट्यूब बेबी पद्वति बनी।

तात्पर्य यह कि इतिहास में अतीत में घटित घटनाओं का वर्णन हैं, जिसे हम अपनी–अपनी समझ से झूठ और सच मानते हैं। परन्तु तर्क देकर और वैज्ञानिक विश्लेषण से वही घटनाऐं सत्य प्रमाणित होती हैं। भूमि पूजा, वायु पूजा, सूर्य पूजा, जल पूजा और जंगल पूजा हमारी ऐतिहासिक विरासतें हैं, और धर्म की दृष्टि से मनुष्य का शरीर भी पांच तत्वों से ही मिलकर बना हैं। विज्ञान के परिप्रेक्ष्य में शरीर मृत होने के बाद इन्हीं पांच तत्वों में विलीन हो जाता हैं।

तुलसी दास रचित रामायण में राम भक्त हनुमान की शक्ति का परिचय देते हुए कहते हैं कि जुग सहस्त्र

जोजन पर भानु, लील्यों ताहि मधुर फल जानु। हमने आस्था के कारण इसे कंठस्थ कर तो लिया और बाद में नासा से सूर्य और पृथ्वी के बीच की दूरी वास्तव में ठीक उतनी ही पाई गई।

अभिप्राय यह कि इतिहास अतीत में घट चुकी घटनाओं का सूचनाबद्ध विश्लेषण करता है और धर्म, आस्था के आवेग में सत्य को सहर्ष स्वीकार करता है। कहने का तात्पर्य यह कि इतिहास साक्ष्य है एक युग नहीं युगों–युगों का। इतिहास प्रमाण है मनुष्य की इंद्रियों पर दक्षता का। इतिहास गवाह है तथ्यों की गोपनीयता का।

इतिहास एक सेतु (पुल) की तरह तर्क और धर्म को परस्पर जोड़े रखने का स्रोत हैं। इतिहास केवल तारीखों का ही उल्लेख नहीं करता। इतिहास वर्तमान को सामने लाकर खड़ा कर देता है अतीत की दूनिया में। जिससे सबक लेकर हम भविष्य में प्राकृतिक विपदाओं, वैमनस्तयाओं, अनीतियों, विध्वंस से बचे रहे। और तर्क के तराजू में धर्म भी पाया जा सके। सत्य को किसी प्रमाण की आवश्यकता नहीं। यह भी चिंतनीय है कि इतिहास की ज्योति के बिना अतीत के दर्पण को देखा नहीं जा सकता। इतिहास काल चक्र का वह पहिया है जो भूत, वर्तमान और भविष्य को संतुलित करता है।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020: भारतीय शिक्षा का नया दौर

मेघा जुयाल
के.एल.डी.ए.वी. (पी.जी.) कालेज, रुड़की, उत्तराखंड

राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 का निर्माण भारतीय शिक्षा को 21वीं शताब्दी के शैक्षिक स्तर पर लाने हेतु किया गया है। इस नीति का आधार रचनात्मकता, क्षमता विकास, संस्कृति, नैतिकता, संज्ञानात्मकता अल्पविराम, भावात्मक अल्पविराम, तार्किक एवं समस्या समाधान इत्यादि जैसी क्षमताओं का विकास करना है। यह नीति पिछली नीतियों 1986/92 के अधूरे कार्यों को पूर्ण कर के उसमें नवीन विचारों की शिक्षा प्रणाली को सम्मिलित करने का उद्देश्य रखती है।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 के आधार सिद्धांत इस प्रकार हैं–

- प्रत्येक बच्चे को बुनियादी साक्षरता प्रदान करना
- बहुविषयक एवं समग्र शिक्षा का विकास
- रचनात्मकता, नवाचार एवं तार्किक सोच का विकास
- रटंत पद्धति का स्थान अवधारणात्मक समझ द्वारा लेना
- बहुभाषिकता
- प्रारंभिक शिक्षा से लेकर उच्च शिक्षा के मध्य तालमेल
- जीवन कौशलों का विकास
- संपूर्ण एवं सतत मूल्यांकन पर जोर
- नैतिकता, मानवता, स्वायत्ता पर आधारित लचीला पाठ्यक्रम
- तकनीकी का प्रयोग
- विशेष क्षमता वाले बालकों की पहचान एवं उनका विकास
- समानता समता एवं समावेशन पर आधारित शैक्षिक कार्यक्रम
- भारतीय संविधान के मूल्यों से ओत–प्रोत शिक्षा प्रणाली

राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 के आलेख को चार भागों में बांटा गया है–

प्रथम भाग स्कूली शिक्षा की समीक्षा करता है। कोठारी आयोग द्वारा वर्तमान में लागू 10+2 शैक्षणिक ढांचे को नई शिक्षा नीति 2020 द्वारा 5+3+3+4 पाठ्यक्रम स्वरूप में पुनर्गठन करने की बात की गई है। इसके तहत क्रमशः फाउंडेशनल स्टेज (दो भागों में अर्थात आंगनवाड़ी/प्री स्कूल के 3+ प्राथमिक स्कूल में कक्षा 1–2 में 2 साल, 3–8 वर्ष के बच्चों सहित), प्रीपेटरी स्टेज (कक्षा 3–5 ,8 से 11 वर्षों के बच्चों सहित), मिडिल स्कूल स्टेज (कक्षा 6–8, 11 से 14 वर्षों के बच्चों सहित) और सेकेंडरी स्टेज (कक्षा 9–12, दो फेज में यानी पहले फेज में 9 और 10 और दूसरे में 11 और 12 व 14 से 18 वर्ष के बच्चों सहित) शामिल होंगे।

प्रारंभिक बाल्यावस्था देखभाल और शिक्षा (ई.सी.सी.ई) की सार्वभौमिक उपलब्धता के लिए आंगनवाड़ी केंद्रों को गुणवत्तापूर्वक एवम् सशक्त बनाया जाएगा ताकि वर्ष 2030 तक यह सुनिश्चित हो सके कि कक्षा 1 में प्रवेश पाने वाला प्रत्येक बच्चा स्कूली शिक्षा के लिए तैयार हो। शिक्षा प्रणाली की प्राथमिकता 2025 तक प्राथमिक विद्यालयों में सार्वभौमिक मूल संख्या ज्ञान एवं मूलभूत साक्षरता प्रदान करना होगा। इस नीति के अंतर्गत कक्षा 1 से 12 तक के छात्र–छात्राओं के नामांकन को बढ़ाना , ड्रॉपआउट विद्यार्थियों की संख्या कम करना और सभी स्तरों की शिक्षा की सार्वभौमिक पहुंच सुनिश्चित करना

है। पाठ्यक्रम में सम्मिलित विषय वस्तु को रुचिकर एवम् लचीला बनाने हेतु खोज आधारित, चर्चा आधारित, विश्लेषण आधारित, प्रयोगात्मक विधियों एवं प्रविधियों का प्रयोग किया जाएगा ताकि विद्यार्थियों के लिए शिक्षा आनंदमयी अनुभव हो।

विद्यालयों में नियुक्त शिक्षकों को स्वयं के व्यवसायिक विकास हेतु प्रत्येक वर्ष 50 घंटों के सीपीडी (सतत व्यवसायिक विकास) कार्यक्रम में प्रतिभाग करना होगा। शिक्षण व्यवस्था शिक्षा हेतु वर्ष 2030 तक के लिए न्यूनतम योग्यता 4 वर्षीय एकीकृत डिग्री होगी जिसमें दाखिला कक्षा 12 के पश्चात दिया जाएगा। दो वर्ष का बी.एड. कार्यक्रम उन व्यक्तियों के लिए उपलब्ध होगा जो स्नातक की डिग्री प्राप्त कर चुके हैं। एक वर्ष की बी. एड डिग्री कार्यक्रम उनके लिए उपलब्ध होगी जिन्होंने 4 वर्षीय स्नातक डिग्री या परास्नातक डिग्री प्राप्त की हो।

यह नीति इस बात की पुष्टि करती है कि यह शिक्षा प्रणाली हमारे समाज के सामाजिक आर्थिक रूप से वंचित जैसे महिला, ट्रांसजेंडर, सांस्कृतिक पहचान जैसे अनुसूचित जाति, जनजाति, भौगोलिक पहचान जैसे गांव, कस्बे के विद्यार्थी, विशिष्ट आवश्यकता जैसे अक्षमता सहित इत्यादि, के प्रत्येक वंचित वर्ग का समावेश कर देश को प्रगति की ओर तत्पर करेगा।

इसके साथ स्कूल काम्प्लेक्स क्लस्टर की स्थापना होगी। माध्यमिक विद्यालय के साथ 6 से 10 किलोमीटर के दायरे में आंगनबाड़ी केंद्र सहित अन्य सभी विद्यालयों होंगे। इस स्कूल काम्प्लेक्स का उद्देश्य संसाधनों का साझा उपयोग करना है।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 के आलेख का दूसरा भाग उच्चतर शिक्षा की और प्रकाश डालता है। उच्च शिक्षा का उद्देश्य मनुष्य का चौमुखी विकास होता है जिसमें उसका सांस्कृतिक, न्यायपूर्ण, चिंतनशील, रचनात्मक, लोकतांत्रिक स्वभाव का विकास होता है। राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 द्वारा उच्चतर शिक्षा में परिवर्तन लाने का प्रयास इस प्रकार किया जाएगा:

- मुक्त व दूरस्थ शिक्षा ऑनलाइन शिक्षा द्वारा उच्च शिक्षा में समानता, समता एवं समावेशन में वृद्धि करना
- विद्यार्थियों के विकास हेतु पाठ्यक्रम, पाठ्यचर्या, मूल्यांकन, शिक्षण कार्यों में परिवर्तन
- संकाय एवं संस्थानों को स्वायत्तता प्रदान करना
- महाविद्यालय, विश्वविद्यालय में उत्तम अनुसंधान हेतु राष्ट्रीय अनुसंधान फाउंडेशन (एन. आर.एफ) का गठन करना
- महाविद्यालय एवं विश्वविद्यालय में गुणवत्ता शिक्षा प्रदान करना

2030 तक सभी उच्चतर शिक्षण संस्थानों (एच.ई. आई.) का उद्देश्य स्वयं को बहुविषयक संस्थान के रुप में स्थापित करना है। नामांकन के स्तर में वृद्धि के लिए सकल नामांकन अनुपात को 26.3% (2018) से बढ़ाकर 50% (2035) करना होगा। समग्र एवम बहुविषयक शिक्षा का निर्माण तभी हो पाएगा जब सभी उच्च शिक्षण संस्थानों के लचीले एवं नवीन पाठ्यक्रम में क्रेडिट आधारित पाठ्यक्रम और सामुदायिक संपर्क, पर्यावरण शिक्षा और मूल्य आधारित शिक्षा शामिल होंगी।

संकाय सदस्यों की गुणवत्ता बढाने हेतु, स्वायत्ता प्रदान की जाएगी जिससे वे पाठ्यपुस्तकों का चयन,असाइनमेंट और आकलन की प्रक्रियाओं को रचनात्मक रुपसे निर्मित कर सकें। उच्चतर शिक्षा में समता और समावेशन को बढ़ाने हेतु प्रवेश प्रक्रिया, पाठ्यक्रम को अधिक समावेशी बनाया जाएगा। भारतीय भाषाओं और अन्य भाषाओं को पढ़ाये जाने वाले पाठ्यक्रमों का निर्माण किया जायेगा। वंचित छात्रों को छात्रवृत्ति और वित्तीय सहायता दी जाएगी।

इस नीति का उद्देश्य है कि व्यवसायिक शिक्षा को मुख्यधारा शिक्षा के साथ सामंजस्य बैठाना। इसके साथ वर्ष 2025 तक स्कूल और उच्चतर शिक्षा प्रणाली के माध्यम से कम से कम 50% विद्यार्थियों को व्यवसायिक शिक्षा का अनुभव प्रदान किया जाएगा। व्यवसायिक शिक्षा को क्रमबद्ध तरीके से सभी विद्यालयों और

उच्चतर शिक्षण संस्थानों में एकीकृत किया जाएगा।

21वीं शताब्दी में ज्ञान समाज बनाने हेतु भारत के शिक्षण संसाधनों में अनुसंधान एवं नवाचार की अत्यंत आवश्यकता है। यह नीति एक राष्ट्रीय अनुसंधान फाउंडेशन (एन.आर.एफ.) की स्थापना करेगी जिसमें राष्ट्र में होने वाली गुणवत्तापूर्ण अनुसंधानों को विकसित व प्रेरित किया जाएगा।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 के आलेख का तीसरा भाग 'अन्य केंद्रीय विचारणीय मुद्दों' का विवरण देता है जैसे व्यवसायिक शिक्षा, प्रौढ़ शिक्षा एवं जीवन पर्यंत शिक्षा। यह भाग भारतीय भाषाओं, कलाओं एवं संस्कृति के संवर्धन की भी बात करता है। नई शिक्षा प्रणाली में प्रौद्योगिकी का उपयोग और उसका शिक्षा के साथ एकीकरण अत्यंत आवश्यक है।

इस नीति के आलेख का चौथा भाग 'क्रियान्वयन की रणनीति' को चिन्हांकित करता है। यह नीति शिक्षा सलाहकार बोर्ड (के.ब.) को सशक्त करने की बात करती है जो शैक्षिक, सांस्कृतिक विकास से मुद्दों पर व्यापक परामर्श एवं समीक्षा करता है। यह शिक्षा नीति 1968 तथा 1986–1992 की शिक्षा नीति की प्रतिध्वनि करता है देश के जीडीपी के 6% को शिक्षा में निवेश करना अनुवांशनीय है, जो कि देश के बौद्धिक, आर्थिक, तकनीकी उन्नति के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण है।

किसी भी नीति की सफलता उसके सुचारू रूप से कार्यान्वयन पर आधारित है। इस नीति की सफलता के लिए विभिन्न निकाय जैसे केंद्र एवं राज्य सरकार, शिक्षा संबंधी मंत्रालय, एन.सी.आर.टी ,एस.सी. आर.टी., उच्चतर संस्थान इत्यादि आपस में सामंजस्य बनाकर के कार्य कर रहे हैं।

इस नीति के क्रियान्वयन के सिद्धांत इस प्रकार हैः–

- नीति की सफलता हेतु प्रयोजन एवं भावना सबसे महत्वपूर्ण है
- यह नीति समग्रता पर आधारित है । अतः इसके कार्य हेतु व्यापक नजरिया होना आवश्यक है ताकि टुकड़ों की जगह समग्रता से उद्देश्यों को प्राप्त किया जा सके।
- शिक्षा का समवर्ती सूची में होने के कारण केन्द्र व राज्यों का समन्वय होना अति आवश्यक है ।
- नीतिगत पहलुओं को चरणबद्ध तरीके से पूर्ण किया जाए क्योंकि अगले चरण की सफलता पिछले चरण के संपूर्ण होने पर आश्रित है।
- प्रत्येक चरण का सावधानीपूर्वक विश्लेषण एवं समीक्षा कर अगले चरण की ओर अग्रसर होना चाहिए ।
- मानव संसाधनों , संरचनात्मक एवं वित्तीय संसाधनों को जुटा कर उनका न्याय हित उपयोग करना आवश्यक है।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 की संरचना का उद्देश्य शिक्षा प्रणाली को गुणवत्तापूर्ण बनाना है जिससे न्याय संगत जीवंत समाज का निर्माण हो जो कि 21वीं शताब्दी में वैश्विक स्तर पर एक ज्ञान के महासागर की भांति उभर कर पूर्ण विश्व को गौरवान्वित कर सकें ।

संदर्भः education.gov.in/sites/upload_files/mhrd/files/NEP_final_HINDI_0.pdf

विज्ञान के क्षेत्र में हिन्दी भाषा का प्रयोगः चुनौतियां तथा संभावनाएं

डॉ.(श्रीमती) स्वाति चढ्ढा
हिन्दी अधिकारी, सीएसआईआर–एनसीएल, पुणे

विश्व की प्रगति में विज्ञान तथा प्रौद्योगिकी का जो योगदान रहा है, उसका प्रभाव स्पष्ट रूप से भारत में दिखाई देने लगा है। आज के भूमंडलीकरण के दौर में उच्च सूचना प्रौद्योगिकी ने हिन्दी की प्रगति में आश्चर्यजनक परिवर्तन तो किये ही हैं साथ ही भारत के परमाणु शक्ति सम्पन्न राष्ट्र बनने में भी उसकी महती भूमिका है। 135 करोड़ से भी अधिक की आबादी वाला यह देश अंतरिक्ष, प्रौद्योगिकी, सूचना प्रौद्योगिकी, चिकित्सा विज्ञान, भौतिक रसायन, खगोल विज्ञान आदि में विश्व के समक्ष महाशक्ति के रूप में पहचाना जाने लगा है। आज आधुनिक तथा तकनीकी रूप से समृद्ध भारत की कल्पना साकार हो गई है। आज चाहे प्रिन्ट मीडिया हो या टीवी चैनल, कम्प्यूटर, इंटरनेट, साहित्यिक, सांस्कृतिक, वैज्ञानिक, विज्ञापन, फिल्म, मोबाईल हो, सभी क्षेत्रों में हिन्दी है। हिन्दी को वैश्विक भाषा कहा जा रहा है, लेकिन इतना सब कुछ हो जाने के बाद भी यदि विचार किया जाए तो विज्ञान/ प्रौद्योगिकी/अनुसंधान तथा शिक्षा के क्षेत्र में हिन्दी की स्थिति कुछ ठीक नहीं है।

भाषा मनुष्य की अमूल्य उपलब्धि है। भाषा केवल संप्रेषण ही नहीं करती, चरित्र का उद्घाटन भी करती है। भाषा के साथ विचार और संस्कृति जुड़ी होती है। भाषा मात्र व्यक्ति के चरित्र को ही नहीं, पूरे राष्ट्र के चरित्र को उजागर करती है। भाषा समाज को जोड़ती है और संस्कृति का वहन करती है। हिन्दी भाषा हजार वर्षों से भारतीयता, भारतीय सभ्यता, संस्कृति, जीवन मूल्य, आध्यात्मिक, सामाजिक उत्कर्ष को वाणीबद्ध करती रही है। हिन्दी आज सर्वग्रहणी क्षमता, समन्वय–शक्ति और मानकता के कारण विश्व भारती की प्रतिष्ठा को प्राप्त है।

हिन्दी भारत की आत्मा है, उसकी प्रतिष्ठा भारत की प्रतिष्ठा है। हिन्दी श्रम और संघर्ष की भाषा है। यह उदार भाषा है और इसकी उदारता के सामाजिक कारणों का अनदेखा नहीं किया जाना चाहिए। जो भाषा उदार नहीं होगी, वह बड़े स्तर पर संपर्क भाषा नहीं बन सकती। हिन्दी हमारे जन मन–गण में इतनी रची बसी है कि यह भारतीय एकता का एक मेरुदंड बन गई है। हिन्दी हमारी वाणी के ओज, माधुर्य और शालीनता को अभिव्यक्ति प्रदान करती है। हिन्दी न केवल अध्ययन और अनुशीलन की भाषा है बल्कि अभिभावन और अभिनंदन की भी भाषा है, पुरुषार्थ और परमार्थ की भी भाषा है। हिन्दी हमारी श्रद्धा का योग है और विश्वास का संयोग। एकता एवं सुरक्षा का प्रतीक है। चिंतन और मनन का नवनीत है।

स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद हिन्दी को राजभाषा के रूप में संवैधानिक मान्यता प्राप्त हुई। उसे देश की संपर्क भाषा, राष्ट्र भाषा का भी दर्जा प्राप्त है ,किंतु खेद की बात है कि शिक्षा के माध्यम या तकनीकी क्षेत्र में हिन्दी भाषा अपने अस्तित्व बचाने की लड़ाई लड़ रही है। लगभग 1000 वर्ष गुलाम रहने के उपरान्त सन् 1947 में स्वतन्त्रता पाने के पश्चात भारत के समक्ष प्रश्न था कि विज्ञान–प्रौद्योगिकी की शिक्षा किस भाषा में दी जाए ? हमारे तत्कालीन शिक्षा शास्त्रियों तथा नीति निर्धारकों ने तर्क दिया कि भारतीय भाषाओं में प्रौद्योगिकी विज्ञान की शिक्षा देने की क्षमता नहीं है। अतः भारत के कर्णधारों ने विज्ञान –प्रौद्योगिकी की शिक्षा तथा प्रशासनिक सेवाओं में चयन के लिए अंग्रेजी भाषा को माध्यम चुना। यदि

देखा जाए तो यह प्रश्न उठना बहुत स्वाभाविक है कि विज्ञान तथा तकनीकी विकास में हम उन देशों से पीछे कैसे रह गए जो देश 1947 में हमसे बहुत पीछे थे। साथ ही अत्यंत छोटे देश भी विज्ञान–अनुसंधान तथा तकनीकी एवं उद्योगीकरण सभी दृष्टियों से हमसे आगे है। जैसे कि इजरायल, फ्रांस, जापान इत्यादि। गौर से देखा जाए तो इन सभी देशों में शिक्षा का माध्यम उनकी अपनी राष्ट्रभाषा ही है। उन देशों ने प्रारम्भ से ही जनसाधारण को समर्थ बनाने में जोर दिया, शिक्षा का माध्यम पहली कक्षा से लेकर उच्चतम कक्षा तक, उनके देश की अपनी भाषा रही। अंग्रेजी भाषा को एक मात्र एक विदेशी भाषा के रूप में पढ़ाया गया। शिक्षा किताबी न होकर उपयोगी तथा समाज की जरूरतों से जुड़ी रही है। इन देशों में प्राथमिक विद्यालयों से लेकर कॉलेजों के छात्र स्कूलों में घरेलू तथा औद्योगिक उपकरणों को बनाने तथा मरम्मत करने के व्यवसाय चलाते हैं।

सभी प्रकार के ज्ञान–विज्ञान को समझने का काम सबसे सरल ढंग से मातृभाषा के द्वारा ही हो सकता है। आप विदेशी भाषा के बल पर लाख बाबू बना सकते हैं, लेकिन जब मौलिक कार्य करना है, तो आपको मातृभाषा की ही शरण में आना पड़ेगा। हमारी सरकार द्वारा हाल ही में घोषणा की गई है कि नई शिक्षा नीति में प्राथमिक स्तर तक मातृभाषा के माध्यम से शिक्षा दी जाएगी एवं अंग्रेजी को एक भाषा/विषय के रूप पढ़ाया जाएगा, न कि माध्यम के रूप में। हालांकि भारत जैसे बहुभाषी देश में यह लागू करना अत्यंत कठिन साबित हो सकता है क्योंकि हर प्रदेश में भी सबकी मातृभाषाएं अलग–अलग होती हैं। शिक्षा के माध्यम के रूप में मातृभाषा के अलावा हिन्दी भाषा को राष्ट्रभाषा–संपर्क भाषा के रूप में यदि लागू किया जाए तो पूरे देश में एकरूपता आ सकेगी। मातृभाषा के माध्यम से शिक्षा प्रदान करने से ज्ञान, विज्ञान, तकनीक और प्रौद्योगिकी की समझ को विकसित करने में सहायता मिलेगी। इसके दूरगामी सकारात्मक परिणाम भविष्य की कोख से जन्म लेंगे, किंतु यह आज की स्थिति में अत्यंत कठिन दिखाई दे रहा है। अन्य देशों में शिक्षा का माध्यम उनकी राष्ट्रभाषा बनाने में कोई कठिनाई इसलिए नहीं आई क्योंकि वहां मुख्य रूप से एक या दो ही भाषाएं बोली जाती है और भाषाओं को लेकर कोई द्वेष नहीं है।

भाषा की मौलिकता को बनाए रखने की दृष्टि से यह प्रश्न महत्वपूर्ण है कि वक्ता या पाठक जिस भाषा के माध्यम से बोलता या सोचता है, क्या उसी माध्यम में उसे वह कार्यान्वित भी करता है? यदि ऐसा ही करता है तो उसकी भाषा तथा साहित्य जीवंत रहेगा और उसकी भाषा के जरिए उसमें समाविष्ट ज्ञान–विज्ञान की सामग्री जनमानस तक बड़ी आसानी से पहुँच सकती है। इसलिए यह जरूरी है कि विज्ञान तथा तकनीकी के नये नये अविष्कारों और तकनीकी जानकारियों को आम जनता तक पहुंचाने के लिए उसे उस देश की राष्ट्र भाषा में भी लिखा होना चाहिए। यही कारण है कि जापान, जर्मनी, फ्रांस, चीन या रूस जैसे देश अपने विदेशी छात्र–छात्राओं को शिक्षा देने से पहले उन्हें अपने देश की राष्ट्रीय भाषा सिखाते हैं। लेकिन हमारे देश में सच्चाई यही है कि आज देश के तमाम आम जन जीवन के कार्यालयों खास कर विज्ञान तथा तकनीकी विभागों में कामकाज का जरिया अंग्रेजी भाषा ही है। अंग्रेजी में उपलब्ध विपुल विज्ञान साहित्य और प्रविधियों की हिन्दी में लाने के लिए निरंतर प्रयास आवश्यक हैं, लेकिन इस समय अंग्रेजी और हिन्दी में उपलब्ध विज्ञान साहित्य की खाई बड़ी है, और बढ़ती जा रही है।

गाँधी जी ने कहा था,''स्वतन्त्रता के पश्चात् चाहे अंग्रेज यहाँ रहें, किन्तु अंग्रेजी भाषा एक भी दिन न रहे।'' अंग्रेजी ने न केवल हमें प्रौद्योगिकी विज्ञान के क्षेत्र में पिछड़ा बना दिया वरन् हमारी दैनन्दिन संस्कृति को भी भ्रष्ट कर डाला। अंग्रेजी के रहते न केवल हम पिछड़े रहेंगे वरन् हमारा पिछड़ापन बढ़ता ही जाएगा। क्योंकि पाश्चात्य संस्कृति हमें व्यक्तिवादी, भोगवादी बना रही है। ''विदेशी भाषा से जो संस्कृति हम सीखते हैं वह गड्डमड्ड और खंडित रहती है। विदेशी भाषा हमारे अनुभवों को खण्डों में बाँट देती है। स्वभाषा में सीखने पर विभिन्न खण्डों के बीच वह अभेद्य दीवार नहीं रहती जो विदेशी भाषा में सीखने पर रहती है। क्योंकि जीवन

के विभिन्न अनुभवों को भाषा समेकित करती है। विज्ञान को विदेशी भाषा में सीखने पर विज्ञान तथा जीवन के बीच दरार रहेगी ही। अतएव विदेशी भाषा द्वारा शिक्षा हमारे व्यक्तित्व को खण्डित करती है।

वैश्वीकरण और भूमण्डलीकरण के इस दौर में युवा पीढ़ी और ज्ञान विज्ञान के विषय में गहनविचार–विमर्श की आवश्यकता है। वर्तमान समय में नयी पीढ़ी एक निर्णायक भूमिका निभा रही है। युवा पीढ़ी विकास के महत्त्वपूर्ण रास्ते पर है। अपनी प्रतिभा और परिश्रम के बल पर हमारी युवा पीढ़ी वर्तमान दुनिया की मांगों के अनुसार स्वयं को तैयार कर रही है और इस क्रम में भारत के ज्ञान–विज्ञान के साहित्य के प्रकाशन को जब हिन्दी में प्रोत्साहन नहीं दिया जा रहा है तब सोचना आवश्यक हो जाता है। ''प्रशासनिक प्रोत्साहन न मिलने के बावजूद हिन्दी में प्रौविज्ञान में बहुत लिखा गया है। 1998 तक केवल 13 भारतीय भाषाओं में प्रौविज्ञान विषयक लगभग 25000 पुस्तकें तथा हिन्दी में 2000 पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं, और 1998 के बाद इस गति में वृद्धि हुई है। भारतीय विज्ञान परिषद्, इलाहाबाद 1915 से 'विज्ञान' नामक मासिक पत्रिका तथा 1952 से 'अनुसंधान' पत्रिका लगातार प्रकाशित कर रहा है। 'विज्ञान प्रगति' मासिक दिल्ली से कोई पचास वर्षों से लगातार प्रकाशित हो रही है जिसकी ग्राहक संख्या 70,000 से 10,00,000 होती है। 'अनुसंधान' पत्रिका में स्नातकोत्तर तथा पीएच डी स्तर के शोध पत्र प्रकाशित होते हैं। सी एस आई आर की वैज्ञानिक और औद्योगिक अनुसंधान पत्रिका उच्च कोटि के शोध पत्र प्रकाशित करती आई है। आई आई टी में थीसिस भी हिन्दी में लिखी जा रही है। शब्दावली आयोग ने हिन्दी में अधुनातन लगभग 8 लाख प्रौवैज्ञानिक शब्दों का निर्माण कर लिया है। हिन्दी भाषा (के शब्दकोशों) में कुल लगभग 3 लाख शब्द होंगे। इससे हिन्दी में प्रौवैज्ञानिक शब्द निर्माण कार्य की महत्ता दिखती है, दूसरे हिन्दी भाषा में प्रौविज्ञान का बढ़ता हुआ महत्त्व भी।

अब हिन्दी ने प्रौद्योगिकी विज्ञान के क्षेत्र में अपनी सामर्थ्य सिद्ध कर दी है तब हिन्दी में उच्च शिक्षा प्रदान करने में अड़चने नहीं आना चाहिए। हर दिन नया ज्ञान विकसित हो रहा है। विकसित होते हुए ज्ञान को यदि हम अपनी भाषाओं में युवा पीढ़ी तक नहीं ले जाएंगें तो युवाओं का एक बहुत बड़ा हिस्सा उस ज्ञान से वंचित रह जाएगा। कम्प्यूटर अब हर भाषा में कार्य कर सकता है। अतः कोई कारण नजर नहीं आता कि नए प्राप्त ज्ञान विज्ञान को हम हिन्दी में क्यों नहीं प्रस्तुत कर सकते।

क्या किया जा सकता है–

1. प्राथमिक स्तर पर शिक्षा का माध्यम क्षेत्रीय भाषा या मातृभाषा हो। अंग्रेजी एक विषय के रूप में पढ़ाई जाए। हाल ही में लागू नई शिक्षा नीति में सरकार का यह प्रावधान है, किंतु इसे अनुशासित तरीके से लागू किए जाने की आवश्यकता होगी।
2. विज्ञान और भाषा का संबंध दृढ़ किया जाए। हिन्दी में विज्ञान पुस्तक लेखन को प्रोत्साहित किया जाए, जिससे विज्ञान जन–जन तक पहुंचेगा।
3. उच्चतर शिक्षा में भी हिन्दी पढ़ायी जाए तभी विद्यार्थियों को अपनी भाषा से कोई कटाव नहीं होगा।
4. विज्ञान संबंधित शोध/अनुसंधान ज्ञान की जानकारी जन सामान्य को भी उनकी भाषा में मिलना अनिवार्य हो ।
5. वैज्ञानिक संगोष्ठियों में शोध पत्र सहज बोलचाल की हिन्दी में हो तथा हिन्दी में प्रकाशित शोधपत्र को भी इंपैक्ट फैक्टर दिया जाए। सिफारिशें संबंधित विभाग की वेबसाइट पर भी हिन्दी में अवश्य हों।

संदर्भः

1. हिन्दी और हम, विद्यानिवास मिश्र, ग्रन्थ अकादमी, नई दिल्ली– 110 002, प्रथम संस्करण–2001.
2. प्रयोजनमूलक हिन्दी और जनसंचार, डॉ राजेंद्र मिश्र, तक्षशिला प्रकाशन, नई दिल्ली– 110 002,

प्रथम संस्करण–2010

3. सूचना क्रांति और विश्व भाषा हिन्दी, प्रो हरिमोहन, तक्षशिला प्रकाशन, नई दिल्ली– 110 002, प्रथम संस्करण–2004.
4. भाषा और प्रौद्योगिकी, डॉ विनोद कुमार प्रसाद, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली– 110 002, द्वितीयसंस्करण– 2008
5. स्मारिका, सातवां विश्व हिन्दी सम्मेलन,5–9 जून 2003 सूरीनाम, आलेख–विज्ञान तथा प्रौद्योगिकी में हिन्दी का महत्व, विश्वमोहन तिवारी,पृ. 141
6. 'बिन हिन्दी सब सून' पृ. 75 , लेखक– गोपाल प्रसाद व्यास।

समकालीन भारतीय साहित्य में अनुवाद की भूमिका

यशपाल सिंह बिष्ट
वा.हि.भू. संस्थान, देहरादून

भारतीय साहित्य को परिभाषित करने की आवश्यकता मात्र ही स्वयं में एक आश्चर्यजनक कारक है। इसके पीछे एकमात्र निहित कारण इस साहित्य का सृजन मात्र ही भारत में होना नहीं है। अपितु भारत जैसे पृथक भाषा समूहों के देश में साहित्य को एकल परिप्रेक्ष्य से परिभाषित करना है। भारत में अनेकों भाषिक व सांस्कृतिक संस्कृतियां विद्यमान है तथा इसमें कोई संशय नहीं है कि सभ्यता व साहित्य दोनों सहसंबंधित एवं एक दूसरे के पूरक हैं। भारतीय साहित्य समग्र रूप से कालांतर में घटित विभिन्न विचारधाराओं यथार्थ घटनाक्रमों का एक जीवंत दर्शन है। भारतीय साहित्य को सभी भारतीय भाषाओं में सृजित पृथक साहित्यों के संगम की संज्ञा से अलंकृत किया जा सकता है। भारतीय साहित्य में भाषाओं की बहुविधा व सृजित साहित्य की एकता भारतीय विविधता का स्पष्ट बोध करवाते हैं। जवाहरलाल नेहरू अपनी पुस्तक ''डिस्कवरी ऑफ इण्डिया'' में भारत की विभिन्न भाषाओं की सांस्कृतिक एकता की विवचना कर चुके हैं। भारतीय साहित्य की संवृद्धि में दो संस्कृत महाकाव्यों यथा रामायण व महाभारत की भूमिका भी अहम रही है। यह दोनों महाकाव्य ईसा से अनेकों शताब्दी पहले से भारतीय साहित्य व संस्कृति को सुदृढ कर भिन्न सभ्यताओं के मध्य सेतु का कार्य बखूबी कर रहे हैं। इन दोनों महाकाव्यों के पुनः लेखन उपरान्त अनेकों भाषाएं समृद्ध हुई। महाभारत के तमिल संस्करण के 12वीं सदी में मलयालम भाषा में पुनः लेखन उपरान्त मलयालम भाषा काफी लोकप्रिय हुई। इसी प्रकार कन्नड़ भाषा में महाभारत के साथ बाणभट्ट कृत कादम्बरी की ''कर्नाटक कादम्बरी'' के रूप में नागवर्मा द्वारा सृजना से कन्नड़ भाषा के सृजनकर्ताओं को काफी प्रेरणा प्राप्त हुई। ऐसे में यह उल्लेख करना ''भारत के पृथक राजनैतिक विभेद के बावजूद रामायण महाभारत एवं पुराणों ने एकीकृत भारत की संकल्पना संवृद्वि के प्रति सहायता प्रदान की गई (दास 2005)'' समग्र भारतीय साहित्य के प्रतिबिंब को दर्शाता है।

भारतीय साहित्य में औपनिवेशी शासन का प्रभावः ब्रितानी शासन के दौरान घटित विभिन्न घटनाक्रमों ने भारतीय साहित्य को काफी प्रभावित किया जैसे मुद्रण प्रणाली का प्रारंभ, नवीन शिक्षा पद्धति का सूत्रपात, आंग्ल भाषा में शिक्षा आदि। अट्ठारहवी सदी के पूर्वार्द्ध में भारतीय साहित्य में एक नया युग प्रारंभ हुआ, साहित्यकारों ने कल्पना के स्थान पर औपनिवेशिक साम्राज्य के शोषक यथार्थ पर सृजना करना अधिक लोकहितकारी समझा। इस दौरान मुद्रणालयों से समाचार पत्रो का प्रकाशन भी शुरू हुआ। समाचार पत्रों ने पाठकों की सामाजिक चेतना का विकास किया। इसके परिणामवश उच्च वर्ग व निम्न वर्ग के चिंतन का अंतराल कम हुआ। साहित्य ने पूर्व में विद्यमान धनी व निर्धन वर्ग को अब शिक्षित एवं अशिक्षित वर्ग में परिवर्तित कर दिया। ब्रितानी साम्राज्य के दौरान अंग्रेजी भाषा को शिक्षण प्रणाली में समावेश करने से प्रशासन शिक्षा में पूर्ववत सदियों से पदस्थ भाषाओं यथा अरबी व फारसी का पूर्णतः विलोप हो गया। अंग्रेजी भाषा का वर्चस्व इस काल में चरम पर था, परंतु यहां उल्लेख करना आवश्यक है कि ब्रितानी साम्राज्य द्वारा स्थानीय लोगों के अंग्रेजी सीखने की अनिवार्यता पर किसी प्रकार का नियम नहीं गठित किया गया था, परन्तु ब्रितानी प्रशासकों के लिए स्थानीय भाषाएं सीखना उनकी सेवा नियमावली का अनिवार्य अंग सदैव रहा। ब्रितानी अधिकारियों की स्थानीय भारतीय भाषाएं

सीखने की अनिवार्यता के परिणाम स्वरूप भारतीय भाषाएं सीखने के लिए अनुवाद पद्धति का उपयोग बखूबी होने लगा। अनुवाद ने विभिन्न भारतीय भाषाओं के साहित्यिक विकास में भी अहम भूमिका अदा की। अनेकों यूरोपीय साहित्यिक विधाओं जैसे ड्रामा, उपन्यास, कविताएं आदि का उपयोग देशज सृजनकर्ता अपनी कृतियों में करने लगे। इस काल में अनेकों भारतीय सृजनकर्ताओं ने विलियम शेक्सपियर की कृतियों का छायानुवाद भारतीय परिदृश्य में किया, जैसे मर्चेण्ट ऑफ वेनिस का हिंदी छायांतरित संस्करण ''वंशुपर का महाजन'' भारतेन्दु हरिश्चन्द ने किया। इसी प्रकार पश्चिम के रोमन साहित्य का भारतीय परिवेश में रूपांतरण अनुवाद विधा के माध्यम से संभव हो सका। इससे भारतीय साहित्यिक पद्धतियों के अग्रेतर विकास के लिए एक पृष्ठभूमि तैयार हुई, जिसकी संकल्पना अनुवाद विधा के कारण ही संभव हो सकी। समग्रतः यह उल्लेख करना समीचीन होगा कि सभी भारतीय भाषाओं के आधुनिक परिप्रेक्ष्य में विकास के लिए अनुवाद ने महत्वपूर्ण भूमिका अदा की।

सर्वप्रथम भारतीय साहित्यिक परिप्रेक्ष्य में उपन्यास विधा की प्रथम सृजना मराठी व बंगाली भाषाओं में वर्ष 1857 में हुई। प्रारंभ के भारतीय उपन्यासों की संकल्पना पश्चिमी लेखकों जैसे स्कॉट की उपन्यास रूपरेखा अनुसार थी, प्रारंभिक उपन्यासों ने तत्कालीन सामाजिक समस्याओं जैसे समाज में महिलाओं की स्थिति, विधवा समस्या, जातिवाद आदि पर पाठकों का ध्यानाकर्षण बखूबी किया। बीसवीं सदी के पूर्वाद्ध देश के अधिकांश लेखक अंग्रेजी उपन्यास विधाओं व शैली से प्रभावित थे, इसका यथार्थ उदाहरण द्विवेदी युग में रचित साहित्य में भी बखूबी देखने को मिलता है। इस काल में अंग्रेजी उपन्यास के सत्त को भारतीय परिप्रेक्ष्य में अनूदित कर भारतीय परिवेश में मिश्रित करने की पद्धति का भी प्रांरभ हुआ। इसी प्रकार अंग्रेजी काव्य से प्रभावित होकर हिंदी जगत में भी कविताओं की सृजना की गई।

भारतीय साहित्य का अंग्रेजी अनुवाद :

भारत में आंग्ल भाषा का इतिहास लगभग तीन सदी पुराना है, भारत में ब्रितानी साम्राज्य स्थापित होने के उपरांत अंग्रजी को सत्ता व वर्चस्व की भाषा के रूप में देखा जाने लगा। ओ. चन्दु मेनन कृत ''इन्दुलेखा'' में भारत में अंग्रेजी भाषा के प्रसार के संबंध में बखूबी उल्लेख देखने को मिलता है, इसी कृति में सर्वप्रथम लिंक भाषा की महत्ता के संबंध में भी चर्चा की गई है। अंग्रेजी भाषा में पाठकों की संख्या में वृहद विस्तार के कारण अनेकों देशज साहित्यों का अंग्रेजी में अनुवाद प्रारंभ हुआ। इससे ज्ञान के प्रसार के लिए एक साझा मंच स्थापित हुआ। इससे वैश्विक पटल पर भी भारतीय साहित्य का प्रसार बखूबी हुआ, अंग्रेजी विद्वान जेम्स प्रिन्सेप द्वारा सन 1837 में प्राचीन ब्राह्मी व खरोष्ठी लिपि में रचित भारतीय कृतियों की व्याख्या से सम्राट अशोक के शिला लेखों का निर्वचन संभव हो सका।

भारतीय परिदृश्य में अनुवाद का इतिहास महर्षि वाल्मीकि कृत संस्कृत रामायण का गोस्वामी तुलसीदास द्वारा अवधी में रामचरित मानस के रूप में रचित किए जाने से भी पहले का है। पश्चिमी परिप्रेक्ष्य की तुलना में भारतीय पाठक अनूदित कृतियों को मौलिक कृति से अधिक सटीकता से अंगीकार करते हैं परंतु आज के युग में भी अनुवाद को एक द्वितीयक विधा के रूप में देखा जाता है। अनुवादक मूल लेखक की तुलना में समतुल्य सम्मान कभी प्राप्त नहीं कर पाते हैं। स्वतंत्रता उपरांत देश में शिक्षा पद्धति त्रिभाषा सूत्र के अनुसार प्रारंभ होने लगी, जिनमें हिंदी, अंग्रेजी व स्थानीय भाषा का संयोजन था। इन तीन भाषाओं में से अंग्रेजी वह माध्यम के रूप में उभरी जिससे अनूदित साहित्य व ज्ञान का आत्मसात किया जा सकता है। इस पद्धति को प्रारंभ करने का मुख्य कारण भारतीय विद्यार्थियों को भारतीय परिवेश में सहजता से वैश्विक परिदृश्य का सहजता से बोध करवाना भी था।

भारतीय साहित्य के अंग्रेजी अनुवाद का एक पहलु वैश्विक पाठकों को भारतीय साहित्य की एक अंतर्दृष्टि

प्रदान करना भी था। इससे न केवल स्थानीय भारतीय भाषाओं के लेखकों को वैश्विक पहचान प्रदान होगी अपितु उन्हें अपनी कृतियों के माध्यम से वह सम्मान भी प्राप्त होगा, जिसके वह काफी पहले से हकदार थे। अनेकों पश्चिमी साहित्यकारों ने भारतीय कृतियों का अंग्रजी में बखूबी हिंदी अनुवाद किया है, जैसे – चार्ल्स विल्किन्स द्वारा श्रीमद्भगवतगीता का अनुवाद, विलियम जोन्स द्वारा कालिदास कृत शकुंतला, जे.डब्ल्यू.एफ. ड्यूमेरेग द्वारा इन्दुलेखा का अनुवाद सर्वविदित है। इन पश्चिमी लेखकों के अन्यत्र अनेक भारतीय अनुवादक यथा निरूपमा दत्त, जे. देविका, ए. कश्यप आदि भी उच्च गुणवत्तापरक अंग्रेजी अनुवाद की सृजना कर रहे हैं।

अनुवाद कार्य में निपुणता

अनुवाद के साथ मौलिक समस्या अनुवाद का सामान्यतः भ्रामक होना है, यह समस्या इसके साथ सम्बद्ध मानवीय पहलू के कारण भी है। एक प्रचलित इतालवी कहावत अनुसार कोई भी अनुवाद मूल कृति के विचारों व भावनाओं को सही, सटीक एवं यथार्थ रूप से अभिव्यक्त नहीं कर सकता है। अनुवाद के लिए अपनी भाषा से अधिक उस भाषा का ज्ञान होना चाहिए, जिससे अनुवाद किया जा रहा है। मूल लेखक की तुलना में अनुवादक का कार्य दुष्कर होने के साथ–साथ श्रम साध्य भी है। अनुवाद कार्य में निपुण होने के लिए व्यक्ति में धैर्य होना आवश्यक है। अनुवादक के पास शब्दों का प्रचुर भण्डार एवं शब्द चयन की कला का होना भी अनिवार्य है। सफल अनुवाद के लिए अनूदित भाषा में वाक्य संरचना, शब्द गठन, प्रवाह में स्पष्टता होनी अनिवार्य है। साहित्यिक अनुवाद में शब्दानुवाद की तुलना भावानुवाद अधिक श्रेयस्कर प्रतीत होता है। अनुवाद कार्य में यह सावधानियां न बरतने पर अनूदित सामग्री हास्यास्पद हो जाती है।

अतः, साहित्यक अनुवाद एक ऐसी कला है, जिसमें दक्षता और निपुणता प्राप्त करने का एक ही उपाय है। प्रयास और अभ्यास। किसी एक भाषा में व्यक्त विचारों की दूसरी भाषा में अभिव्यक्ति ही अनुवाद कहलाता है। अनुवादक के पास साहित्य को आत्मसात करने और सरल, सुस्पष्ट अभिव्यक्ति की कला भी अनिवार्य है। साहित्यकार के रूप में मूल लेखन अपेक्षाकृत सरल व सहज होता है, क्योंकि मूल लेखक के पास विचारों की अभिव्यक्ति की पूर्ण स्वतंत्रता होती है। मूल लेखक प्रतिबंधों से मुक्त एक स्वछंद परिवेश में विचरण कर सकता है परंतु अनुवादक के पास ऐसी किसी भी प्रकार की छूट नहीं होती है। अनुवादक की एक भाषा सीमा व मर्यादा होती है, उसे उसी में रहकर मूल लेखक के विचारों व भावनाओं को अभिव्यक्त करना होता है। अनुवादक की भाषा शैली सुनियोजित, सुबोध, ग्राह्य, प्रवाहमय, रसयुक्त होनी चाहिए। इस प्रकार की भाषा में सृजना के लिए अथक परिश्रम, लगन और अभ्यास आवश्यक है। जिस प्रकार कोई सुकवि, कोई कुशल तथा उच्च कोटि का रचनाकार ही कोई श्रेष्ठ अथवा कालजयी रचना दे सकता है, उसी भांति एक मंझा हुआ, एक सिद्धहस्त अनुवादक ही किसी श्रेष्ठ रचना के सभी गुणों को संरक्षित करते हुए श्रेष्ठ अनुवाद दे सकता है।

भारत जैसे बहुसामासिक, बहुभाषी राष्ट्र में अनुवाद की अत्यधिक महत्ता है। अनुवाद कला के माध्यम से एक क्षेत्र विशेष के लोग दुसरे क्षेत्र की विचारधाराओं व साहित्य का मंथन कर लाभान्वित हो सकते हैं। अनुवाद अनेकता में एकता के सिद्धांत को परिपूर्ण करने के लिए भी एक माध्यम है। अनुवाद के बगैर अंतरराष्ट्रीय स्तर पर संप्रेषण व विचारों का आमजन के मध्य स्थापन संभव नहीं हो सकता है। विविधता व अनेकता को एकता में पिरोकर अनुवाद साहित्य की समृद्धि में एक नवीन आयाम प्रदान करता है। इस प्रकार अनुवाद कला समकालीन परिदृश्य में साहित्य समृद्धि का एक महत्वपूर्ण सोपान है।

विज्ञान के प्रचार – प्रसार से जुड़े कुछ बुनियादी सवाल

सुभाष चंद्र लखेड़ा
द्वारिका, नई दिल्ली

भारत में विज्ञान का प्रचार– प्रसार सरकारी हाथों में है। यहाँ निजी क्षेत्र की भागेदारी नहीं के बराबर है। कुछ निजी क्षेत्र के उद्योग धंधों में अनुसंधान के नाम पर कुछ काम अवश्य होता है किन्तु उसका संबंध विज्ञान के प्रसार से नहीं है। उसका संबंध तो सिर्फ विज्ञान से पैसा कमाने तक सीमित रहता है। अब सवाल उठता है कि सरकारी क्षेत्र विज्ञान के प्रचार–प्रसार में कितना प्रभावी है? विशेषकर, आजादी के बाद इस क्षेत्र में कितना कार्य हुआ और उसका हमारे समाज की दशा और दिशा को सुधारने में क्या भूमिका रही है ?

इन सवालों का जवाब खोजने के लिए जरूरी है कि हम ऐसे सभी सरकारी विभागों के बारे में पहले संक्षेप में चर्चा कर लें जिनसे हम विज्ञान के प्रचार – प्रसार की अपेक्षा रखते हैं। इनमें सर्वोपरी स्थान भारत सरकार के विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी मंत्रालय का है। बहरहाल, भारत सरकार में यूं तो कोई भी ऐसा मंत्रालय या विभाग नहीं है जिसका रिश्ता कहीं न कहीं विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी और इसके प्रचार – प्रसार से न हो किन्तु ऐसे मंत्रालयों की संख्या भी कम नहीं है जिनका संबंध सीधे तौर पर विज्ञान के सृजन और उसके प्रचार – प्रसार से है। नवीन एवं अक्षय ऊर्जा मंत्रालय, ऊर्जा मंत्रालय, मानव संसाधन विकास और दूरसंचार एवं प्रौद्योगिकी मंत्रालय, कृषि मंत्रालय, खाद्य प्रसंस्कृत मंत्रालय,पेट्रोलियम एवं प्राकृतिक गैस मंत्रालय, पृथ्वी–विज्ञान मंत्रालय, जल संसाधन मंत्रालय, रक्षा मंत्रालय, वन एवं पर्यावरण मंत्रालय, खेल एवं युवा मंत्रालय, शिक्षा मंत्रालय, सांख्यिकी एवं कार्यक्रम क्रियान्वयन मंत्रालय, स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण मंत्रालय और, सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय को इस सूची में शामिल कर सकते है। इसके आलावा परमाणु ऊर्जा विभाग एवं अंतरिक्ष विभाग का संबंध भी विज्ञान के प्रसार से जुड़ा है। इन सभी मंत्रालयों एवं विभागों के तहत अनेक ऐसी संस्थाएं एवं प्रयोगशालाएं हैं जिनका कार्य विज्ञान का सृजन एवं प्रसार करना है। उदहारण के लिए रक्षा मंत्रालय का 'रक्षा अनुसंधान एवं विकास संगठन', कृषि मंत्रालय का 'भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद्', स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण मंत्रालय से संबंधित 'भारतीय आयुर्विज्ञान अनुसंधान परिषद्', और भारत सरकार के विज्ञानं एवं प्रौद्योगिकी मंत्रालय द्वारा पोषित 'वैज्ञानिक एवं औद्योगिक अनुसंधान परिषद्' ऐसे प्रमुख वैज्ञानिक संगठन हैं जिनसे यह अपेक्षा की जाती है कि वे सतत रूप से विज्ञान का प्रसार करते रहेंगे।

यद्यपि ऐसे सभी संगठन आजादी से पहले भी हमारे यहाँ किसी न किसी रूप में मौजूद थे किन्तु आजादी के बाद देश की जरूरतों को ध्यान में रखते हुए इन सभी में व्यापक रद्दोबदल किये गए ताकि ये भारत को वैज्ञानिक और प्रौद्योगिकी दृष्टि से आत्मनिर्भर बनाने में मददगार हो सकें। रक्षा अनुसन्धान एवं विकास संगठन की स्थापना वर्ष 1958 में हुई। सम्प्रति इसके अंतर्गत 60 प्रयोगशालाओं/संस्थानों का एक नेटवर्क है जो देश की रक्षा जरूरतों के मुताबिक विज्ञान और प्रौद्योगिकी से जुड़े विभिन्न विषयों पर अनुसंधान एवं विकास के कार्यों में लगा है। भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद् के अंतर्गत 97 संस्थान और केंद्र तथा राज्यों द्वारा संचालित 70 कृषि विश्वविद्यालय हैं। भारतीय आयुर्विज्ञान अनुसन्धान परिषद् की स्थापना वर्ष 1949 में हुई और इस समय इसके तहत 26 राष्ट्रीय प्रयोगशालाएं और छह क्षेत्रीय आयुर्विज्ञान अनुसंधान केंद्र हैं। जहां तक वैज्ञानिक एवं औद्योगिक अनुसंधान परिषद् का सवाल है, इसकी 38 प्रयोगशालाएं एवं 50

फील्ड स्टेशन हैं। इसको विज्ञान और प्रौद्योगिकी के विभिन्न क्षेत्रों में अनुप्रयुक्त अनुसंधान तथा उसके परिणामों के उपयोग पर बल देते हुए अनुसंधान एवं विकास परियोजनाएं शुरू करने की जिम्मेदारी सौंपी गई है।

इन संस्थानों/संगठनों के अलावा विज्ञान के प्रसार के लिए हमारी सरकार ने अलग से भी कुछ संस्थान बनाये हैं जिनका कार्य प्रत्यक्ष रूप से विज्ञान का प्रसार करना तो नहीं है किन्तु इस कार्य में सहायता पहुंचाना है। हम सभी जानते हैं कि आधुनिक विज्ञान और प्रौद्योगिकी को आत्मसात किए बिना कोई भी भाषा राष्ट्र की संपूर्ण जरूरतों को पूरा नही कर सकती है। केंद्र सरकार ने इस बात को समझते हुए हिंदी में वैज्ञानिक और तकनीकी शब्द उपलब्ध करवाने के लिए 'वैज्ञानिक और तकनीकी शब्दावली आयोग' का गठन किया। आज आयोग द्वारा किए गए परिश्रम के बदौलत हिंदी में ऐसे शब्दों का विपुल भंडार उपलब्ध है। सभी जानते हैं कि इन शब्दों का उपयोग वैज्ञानिक और तकनीकी लेखन में होना है ताकि विज्ञान का प्रसार आमजन तक किया जा सके। इतना ही नहीं, हमारे सरकारी वैज्ञानिक संगठनों ने कुछ ऐसे स्वतंत्र संस्थान भी बनाये हैं जिनका कार्य सिर्फ और सिर्फ विज्ञान का प्रसार करना है। ऐसी प्रमुख संस्थाओं में राष्ट्रीय विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी संचार परिषद्, विज्ञान प्रसार, राष्ट्रीय विज्ञान संचार एवं सूचना संसाधन संस्थान, राष्ट्रीय विज्ञान संग्रहालय परिषद् और नेहरु तारामंडल जैसे संस्थान/इकाइयाँ शामिल हैं।

बहरहाल, यह एक कटु सत्य है कि सारे ताम–झाम के बावजूद हमारे सरकारी क्षेत्र विज्ञान का उतना प्रसार नहीं कर पाये हैं जितने की उनसे अपेक्षा थी। यहां मैं विज्ञान परिषद् प्रयाग, इलाहाबाद की चर्चा करना चाहूंगा। वर्ष 1913 में स्थापित इस संस्था ने विज्ञान की जानकारी को आमजन तक पहुंचाने के लिए अब तक जितना कार्य किया है, वह सरकारी विभागों और मंत्रालयों के लिए सबक हो सकता है। सरकारी विभागों ने विज्ञान प्रसार के कार्य को उसी तरह से किया जैसे कोई सरकारी बाबू पानी अथवा बिजली के बिल जमा करता है। दरअसल, विज्ञान सृजन की तरह विज्ञान प्रसार का काम भी एक मिशन के रूप में लिया जाना चाहिए। हमारे सरकारी संस्थानों ने विज्ञान प्रसार संबंधी पुस्तकें छापी तो हैं किन्तु वे छपने के बाद आम जनता को नहीं पहुंचाई गयी। सरकारी क्षेत्र में आज तक जो भी लोकप्रिय विज्ञान पत्रिकाएं छप रही हैं, उनका वितरण किसी ऐसे अधिकारी के हाथ में होता है जिसका पत्रिका के प्रकाशन से कोई तालुक नहीं होता है। फलस्वरूप, पत्रिकाएं छपने के बाद भी गोदामों में पड़ी रहती हैं। विभिन्न मंत्रालयों से जुड़े वैज्ञानिक संगठनों के तहत आने वाली सभी प्रयोगशालाएं जो गृह पत्रिकाएं छापती हैं, उनमें विज्ञान संबंधी सामग्री बहुत कम होती है। जो थोड़ी बहुत विज्ञान संबंधी सामग्री उनमें मौजूद रहती है, अक्सर उसे देखकर यही लगता है कि लिखने वाले ने उसे शायद मजबूरी में या किसी दबाव में लिखा है। यदि कोई उत्कृष्ट विज्ञान लेख उसमें छपा भी हो तो उसके लेखक को कहीं से कोई ऐसा प्रोत्साहन नहीं मिलता है जिससे उसमें वह भावना बलवती हो जो किसी वैज्ञानिक को लोकप्रिय विज्ञान लेखन के लिए प्रेरित करती है।

मैं अपने दीर्घकालिक अनुभव के आधार पर यह निसंकोच कह सकता हूं कि हमारे देश में मौजूद सैकड़ों प्रयोगशालाओं में अपवाद स्वरुप एक या दो ऐसी प्रयोगशालाएं हो सकती हैं जहां इस बात पर गंभीरता से विचार होता हो कि विज्ञान का प्रसार कैसे किया जाये ? घड़ी देख कर नौकरी करने वाले लोगों से इस तरह की आशा रखना व्यर्थ है। यूं ऐसे लोग भी आपको इन वैज्ञानिकों के बीच मिल जायेंगे जो घड़ी देख कर नौकरी नहीं करते हैं किन्तु ऐसा वे विज्ञान के सृजन या प्रसार के लिए नहीं अपितु अपने प्रचार– प्रसार के लिए करते हैं ताकि वे समय से पहले प्रोन्नति पाते रहें। ऐसे लोग देश और समाज का अपेक्षाकृत अधिक नुकसान करते हैं। ये अक्सर समाज को गलत जानकारी परोसते हैं और आंकड़ों से खिलवाड़ कर अपने वरिष्ठ अधिकारियों को गुमराह करते हैं और कई बार तो पूरे

देश को गुमराह करते हैं। मुझे एक ऐसी बात याद आ रही है जिसे मैंने वर्ष 1972 – 73 के दौरान सुना था। एक वैज्ञानिक ने जीन संबंधी अनुसंधान हेतु एक परियोजना पर कार्य करने की इच्छा अपने किसी ऐसे अधिकारी से जताई जो प्रशासनिक सेवा से तालुक रखते थे। वे अधिकारी तपाक से बोले, 'जीन तो अपने कपड़ा मिलों में वर्षों से बनाई जा रही है, तुम इस पर क्यों सर खपाना चाहते हो।' हो सकता है यह किस्सा किसी की कल्पना की उपज हो किन्तु इससे मिलते–जुलते किस्से अक्सर सुनने में आते हैं।

राष्ट्र की प्रगति के लिए विज्ञान सृजन और उसका प्रसार, दोनों ही बेहद जरूरी हैं। हम जिस वैज्ञानिक चेतना की बात करते आए हैं, वह तभी संभव है जब हम सरकारी और गैर सरकारी, दोनों स्तरों पर विज्ञान की जानकारी उस आम आदमी तक पहुंचाएं जिसके आंसू पोछने का स्वप्न बापू ने देखा था। इसमें तनिक भी संदेह नहीं होना चाहिए कि विज्ञान और प्रौद्योगिकी की मदद से हम गरीबी से निजात पा सकते हैं और एक ऐसे भारत का निर्माण कर सकते हैं जिसकी सोच आधुनिक और प्रगतिशील हो। यह खेद की बात है की हमारे वैज्ञानिक जिस भाषा में बात करते हैं, वह आम भारतीयों की भाषा नहीं होती। वे जिन मुद्दों पर परियोजनाएं लेते हैं उनका संबंध भारतीय समस्याओं से नहीं होता। वे स्वदेश के बजाए विदेश के जर्नलों में अपने कार्यों का विवरण छपवाना चाहते हैं। वे सिर्फ एक ही बात दोहराते मिलेंगे, 'हमारे जर्नल अंतरराष्ट्रीय स्तर के नहीं हैं।'

ऐसे लोग क्या यह बताने की कृपा करेंगे कि हमारे जर्नलों का स्तर कैसे बेहतर हो सकता है? अगर हमारे देश को तरक्की करनी है तो उसके लिए किसी विदेशी को नहीं अपितु हमें ही कठिन परिश्रम करना होगा। अगर हमें अपने जर्नलों को बेहतर बनाना है तो हमें अपने अच्छे शोध पत्र और रिव्यू आलेख उनमें छापने होंगे। हम इस तथ्य से परिचित हैं कि विदेशी जर्नल महंगे होने के कारण हमारे विद्यालयों के पुस्तकालयों तक नहीं पहुंच पाते हैं। फलस्वरूप, हमारे छात्र तक विज्ञान और प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में हो रहे नवीनतम कार्यों से परिचित नहीं हो पाते हैं। सरकार को अब अविलम्ब ऐसे सभी कदम उठाने होंगे जो विज्ञानं प्रसार के कार्य को वह गति प्रदान कर सकें जो वर्ष 2030 तक हमें एक विकसित राष्ट्र का दर्जा दिलाने में सहायक हो सकते हैं। प्रसन्नता की बात है कि सन् 2019 से केंद्र सरकार ने इंडिया साइंस चैनल शुरू किया है जो विज्ञान प्रसार का एक डिजिटल चैनल है। विज्ञान प्रसार में यह चैनल और इसके कार्यक्रम कितना योगदान दे रहे हैं, इसका भी समय समय पर आकलन करना जरूरी है।

और अंत में यहां यह उल्लेख करना चाहूंगा की अगर हमें विज्ञान का प्रसार करना है तो उसमें हमारे मीडिया की भूमिका भी सकारात्मक होनी चाहिए। हमारा प्रिंट और इलेक्ट्रोनिक मीडिया विज्ञान के प्रसार के बजाए अंधविश्वासों पर आधारित सामग्री को परोसने में रूचि रखता है। वे वैज्ञानिकों के बजाए पोंगा पंडितों और कठमुल्लाओं को वरीयता देते हैं। निर्मल बाबा और तथाकथित राधे मां की चर्चा से समाज और देश का कोई लाभ नहीं होने वाला है। हमारे मीडिया में जादू – टोने के विज्ञापन जिस बेशर्मी से छापे जाते हैं, उसे देखकर यह कतई महसूस नहीं होता है कि हम इक्कीसवीं शताब्दी के तीसरे दशक के दूसरे वर्ष में प्रवेश कर चुके हैं।

आत्मनिर्भर भारत की दिशा में हिंदी का योगदान

कल्पना चंदेल
वा.हि.भ. संस्थान, देहरादून

आत्मनिर्भरता का आशय किसी पर प्रत्यक्ष या परोक्षा रूप से आश्रित न रह कर स्वयं के भरण–पोषण में समर्थ होने से है। आधुनिक भारत में जीविकोपार्जन के अनेक विकल्प उभरे हैं। इस आधुनिक परिपेक्ष्य में हिंदी के प्रयोक्ता किस प्रकार आत्मनिर्भर होकर न केवल अपनी आजीविका का अर्जन कर सकें, अपितु देश की अर्थव्यवस्था में भी अपना योगदान दे सकते हैं, इस पर विस्तार से इस लेख में प्रकाश डाला गया है।

हिंदी भाषा में अपने ज्ञान से जीविकोपार्जन हेतु कुछ विकल्प

आज के इस महंगाई भरे युग में अपना भरण–पोषण करना काफी दुष्कर होता जा रहा है और इसके ऊपर कोरोना त्रासदी से अर्थव्यवस्था का हाल सर्वविदित है। हिंदी भाषा के जानकारों को वैसे ही इस समाज में उचित सम्मान की दृष्टि से नहीं देखा जाता है। ऐसे में हिंदी के ज्ञाता करे तो क्या करें। पुस्तकों में तो हमने अनुस्वार, अनुनासिक के सिद्वांतों से लेकर संधि–समास, प्रत्यय, उपसर्ग से लेकर भाषा साहित्य में अनेकों रचनाओं तथा पुस्तकों का पठन कर लिया परन्तु अंत में अपना भरण–पोषण करने के लिये सीखी गई इन उपर्युक्त विधाओं का उपयोग कैसे करें, इस पर विचार करना अति आवश्यक है।

शिक्षण– यदि आप हिंदी में स्नातकोत्तर उपाधिधारी/नेट/जे.आर.एफ. या बी.एड. उत्तीर्ण हैं तो आप शिक्षा के क्षेत्र से जुड़ कर अपना जीविकोपार्जन कर सकते हैं। अब आप पूछेंगे कि इस कोरोना काल में किसने पढ़ा, और कैसे पढ़ा– विगत दो वर्षों में ऑनलाइन टीचिंग प्लेटफार्म की माँग अचानक से बढ़ी है। आप किसी भी प्लेटफार्म के एच.आर. सेक्शन से ई–मेल द्वारा संपर्क कर सकते हैं, आपके ज्ञान तथा शिक्षण कौशल को परखने के लिये आपका ऑनलाइन साक्षात्कार होंगे तत्पश्चात आपको उस प्लैटफार्म पर कुछ कक्षा, आवंटित कर दी जायेंगी। धीरे–धीरे आप अपने शिक्षा कौशल से आर्थिक रूप से प्रगति कर सकते हैं। जरा आंकड़ों पर गौर करें इस वर्ष सीटैट (केन्द्रीय अध्यापक पात्रता परीक्षा) हेतु लगभग 50 हजार आवेदक हैं तथा इसमें से वैकल्पिक भाषा प्रथम या द्वितीय के रूप में हिंदी कितने छात्रों के पास होगी यह सोचिये।

हमारी शिक्षा पद्धति हमें बस निरंतर पढ़ते रहना सिखाती है उसका सार्थक रूप से उपयोग करना तो हमें स्वयं से ही सीखना होगा। यह शिक्षा पद्धति की ही तो देन है कि विद्यालयी शिक्षा, तत्पश्चात स्नातक, स्नातकोत्तर उसके बाद बी.एड. या नेट की तैयारी के बाद भी अधिकांश युवा घर पर खाली बैठ कर सोशल मीडिया या यू–ट्यूब में समय व्यर्थ कर रहें हैं। इसके बाद भी भविष्य को लेकर अनिश्चित हैं। ऑनलाइन शिक्षा द्वारा सक्षम युवक/युवतियां आजकल अपने लॉक डाउन से पूर्व के सैलरी पैकेज से अधिक अर्जित कर रहे हैं।

कंटैंट राइटर: समाचार पत्रों से लेकर मासिक पत्रिकायें अब ऑनलाइन भी प्रकाशित हो रही हैं, ऐसे में आप किसी भी ऐसे संगठन से जुड़ सकते हैं जो हिंदी माध्यम के छात्रों/समसामयिक विषयों पर हिंदी में गुणवत्ता से भरी जानकारी प्रदान कर रही हैं। आज हर किसी के फोन में इंटरनेट है ऐसे में इस माध्यम पर गुणवत्ता से भरपूर लेख प्रदान करने के प्रति लेख रु–350/– से लेकर अधिकतम आपकी क्षमता अनुसार आप अनुभव प्राप्त होने पर अधिक राशि अर्जित कर सकते हैं। इस कार्य में प्रवीणता प्राप्त करने पर

आपको प्रतिष्ठित सगठनों/व्यक्तियों की ओर से लेख लिखने का कार्य भी सम्मानजनक मानदेय अनुसार कर सकते हैं।

प्रूफ शोधक (प्रूफ रीडर): जब कोई भी पुस्तक/उपन्यास प्रकाशक द्वारा प्रकाशित होता है उससे पूर्व उसे अवश्य किसी सक्षम प्रूफ रीडर द्वारा पढ़ा जाता है तथा प्रूफ रीडर उसमें व्याकरण/भाषा/वर्तनी संबंधित अशुद्धि को चिन्हित करता है। इस कार्य हेतु आप प्रतिष्ठित प्रकाशकों से संपर्क कर सकते हैं। अनेकों कम्पनियां प्रति वाक्य/पृष्ठ अच्छी दर से पारिश्रमिक का भुगतान करती हैं।

यू–ट्यूब चैनल: अपना स्वयं का यू–ट्यूब चैनल प्रारंभ कर आप शिक्षा कार्य कर सकते हैं। इसमें आपके व्याख्यान देने के कौशल के साथ–साथ उपयुक्त विषय तथा लाभार्थी वर्ग का चयन करना भी आप पर निर्भर करता है। हालांकि, चैनल को सफलतापूर्वक चलाना तथा सब्सक्राइबरों की संख्या में वृद्धि का कौशल आप पर निर्भर करता है।

अनुवाद: वर्तमान परिस्थितियों में इस कार्य को निपुणता से करने वाले व्यक्तियों की काफी मांग है। यदि आप अंग्रेजी भाषा के मूल भाव स्पष्टता से अधिग्रहित कर उसे उसी प्रभाव तथा प्रवाह से हिंदी में अभिव्यक्त करने का कौशल रखते हैं तो आप इस कार्य हेतु उपयुक्त व्यक्ति हैं। अनुवाद कार्य में न्यूनतम पारिश्रमिक प्रति शब्द 50 पैसे की दर से अधिकतम 5–8 रुपये प्रति शब्द तक होता है। यह दरें अनुवाद सामग्री पर निर्भर करती हैं। आजकल प्रतियोगी परीक्षाओं के लिए सामग्री को हिंदी में तैयार करने के लिए, योग्य अनुवादकों को अनेकों कम्पनियां फ्री–लांसर के रूप में अनुबंधित कर रही हैं। आप घर बैठकर अपने समय का इस कार्य हेतु सदुपयोग कर सकते हैं। पुस्तक लेखन हो या विधि के क्षेत्र में मुख्तारनामा या विक्रय–विलेख इन कार्यों के लिए सक्षम व योग्य अनुवादकों की हमेशा ही आवश्यकता रही है।

उपर्युक्त कार्यों में से आप अपनी रूचि अनुसार किसी भी पेशे का चयन कर सकते हैं परंतु इस कलयुग में धोखाधड़ी करने वाले भी बहुत लोग हैं। कभी भी किसी कंपनी/व्यक्ति के बहकावे में आकर पंजीकरण शुल्क अदा न करें। किसी भी समझौते/प्रस्ताव पर 'हाँ' करने से पूर्व अपने बुद्धि तथा विवेक का उपयोग हमेशा करें। सूचना क्रान्ति व वैश्वीकरण के इस युग में आप हिंदी भाषा ज्ञान का उपयोजन अपने आर्थिक उन्नयन में कर सकते हैं। आर्थिक रूप से सुदृढ़ युवा वर्ग देश के विकास में अहम भूमिका अदा कर सकता है। कोई भी कार्य छोटा या बड़ा नहीं होता, बस उस कार्य को करने के लिये इच्छाशक्ति और नेक विचारों को आवश्यकता होती है। समय अनुसार परिवर्तित होना ही सफलता की परम कुंजी है। ऐसे में सूचना प्रौद्योगिकी के साधनों का ईष्टतम उपयोजन यदि हिंदी के ज्ञाताओं द्वारा किया जाएगा तो वह न केवल आर्थिक रूप से सक्षम बनेंगे, अपितु समाज में भी उनकी प्रतिष्ठा में उन्नयन होगा।

आधुनिक परिदृश्य में संबोधन सूचकों की प्रासंगिकता

यशपाल सिंह बिष्ट
वा.हि.भू. संस्थान, देहरादून

पारिवारिक सदस्यों के अन्यत्र जब हमें किसी व्यक्ति को मौखिक रूप से पुकारने की आवश्यकता प्रतीत होती तो अक्सर हम उस क्षेत्र विशेष में प्रचलित संबोधन शब्दों का उपयोग करते हैं। इन सूचक शब्दों से न तो उपयोगकर्ता को असहजता का बोध होता है, न ही संबोधित व्यक्ति में हीनता का समावेश होता है। अक्सर देखा गया है ये संबोधक शब्द अपने आप में निकटता व अपनापन का समावेश धारित किए होते हैं परंतु जब समाज/व्यक्ति आधुनिकवाद की ओर अग्रसर होता है, तो उसे यह संबोधन सूचक शब्द जाति सूचक शब्दों के समान प्रतीत होने लगते हैं। जैसे 'भाईजी' शब्द का अत्यधिक उपयोग हरिद्वार–बिजनौर पट्टी में होता है, कालांतर में इस शब्द का उपयोग देहरादून पट्टी में भी सहजता से होने लगा। आप चाहे तो किसी फल विक्रेता को 'भाईजी' कहकर बुला सकते हैं, या इसका उपयोग परस्पर बोलचाल में समकक्षों के मध्य भी कर सकते हैं, भाईजी शब्द की मिठास ही अनूठी है। अनेक गुरूजन अपने वरिष्ठ छात्रों को इस संबोधन से संबोधित कर छात्र–शिक्षक संवाद में सहजता की मिश्री घोल देते हैं, या किसी गोलगप्पे वाले को प्यार प्रेम से भाई जी बोलकर आप प्यार प्रेम से फ्री पापड़ी का आनंद ले सकते हैं। प्रतिलोमतः आज के इस दौर में यदि हम इस क्षेत्र के किसी विख्यात मनुष्य को 'भाईजी' नाम से संबोधित करने की चेष्टा करते हैं तो वह व्यक्ति असहज सा प्रतीत होने लगता है। ऐसे में हमें त्वरित गति से 'भाई' का लोप कर व्यक्ति विशेष के नाम से प्रतिस्थापित कर 'जी' को अनुयोजन में पूर्ववत् की तरह पदस्थापित करने से संबोधनों की सहजता फिर से वापस आ जाती है।

इसी प्रकार कुमाऊं क्षेत्र के अल्मोड़ा जिले में 'ददा' शब्द का बहुतायत उपयोग देखने को मिलता है। इसका यथार्थ उदाहरण मैं सप्ताह पूर्व अपने देशाटन के दौरान देख चूका हूँ। सर्वप्रथम कोसी के निकट मनान नामक स्थान में एक होटल स्वामी द्वारा मुझे 'ददा' नाम से संबोधित किया, उस समय मैंने इस पर इतना गौर नहीं किया, बस अपनी उम्र या काया को लेकर मुझे थोड़ी शंका हुई, क्या मैं उम्रदराज तो नहीं हो गया। परंतु उसी शाम भोजनकक्ष में कुछ हम उम्र युवा भी मुझे 'ददा' कहकर संबोधित कर रहे थे, तब मुझे प्रतीत होने लगा, यहां 'भाईजी' की जगह 'ददा' ने ले ली है। इसी प्रकार अल्मोड़ा जिले के ठेठ कुमाऊंनी क्षेत्रों जैसे सोमेश्वर, ताकुला, गुरड़ाबांज पट्टी, जागेश्वर धाम इत्यादि क्षेत्रों में 'दाज्यु' शब्द सहज बोलचाल में आम है। यहां 'ददा' व 'दाज्यु' शब्द ही बंधुत्व का प्रतीक है। यहां हम उम्र व्यक्ति को 'ददा' बड़ों को 'दाज्यू' तथा छोटों को 'भुला/भुली' कहने की परंपरा है। स्थानीय परिवेश से इतर इन क्षेत्रों के निवासियों को जब दिल्ली या देहरादून में कोई अन्य 'ददा'–'दाज्यु' से संबोधित करता है तो वह अत्यधिक असहज प्रतीत करने लगता है। इसका बखूबी उल्लेख शेखर जोशी द्वारा रचित कहानी ''दाज्यू'' में देखने को मिलता है, जब दिल्ली के एक ढाबे में काम करने वाले कुमाऊं अल्मोड़ा निवासी बालक द्वारा उसी क्षेत्र के प्रतिष्ठित व्यक्ति को बारंबार दाज्यू शब्द की आवृत्ति से संबोधित करने पर व्यक्ति द्वारा बालक को ''सबके सामने क्या दाज्यू–दाज्यू करते रहते हो, किसी की प्रेस्टिज का ख्याल नहीं'' यह कहकर दुत्कार दिया जाता है। यथार्थ में भी यही स्थिति देखने को मिलती है, शायद हमारी संस्कृति के लोप का भी यही कारण हो, शायद अपनी सभ्यता पर गर्व होने के स्थान पर लज्जा को बोध हमें अपनेपन से दूर कर रहा हो।

इन दो उदाहरणों के इतर हमें एक अन्य परिवेश में ऐसे सूचक शब्दों का उपयोग देखने को मिलेगा जिनकी सृजना अत्यधिक अहं और सत्ता के नशे में चूर होने के द्वारा होती है। यह परिवेश हमें अक्सर बड़े अफसरों के बाहर गलियारों में देखने को मिलेगा, अंदर शांत सन्नाटा पसरा हुआ, भीतर जाने वाले व्यक्ति अक्सर भयाकुल, ऐसे में हमें बाहर खड़े प्रथम श्रेणी दरबान रूपी चपरासी किसी असुर से कम प्रतीत नहीं होते। इनके लिए प्रत्येक श्रेणी के कार्मिक व अधिकारी एक समान हैं, आजकल इनके सबसे प्रिय संबोधन सूचक ऐ, अबे, तू, ओए, आदि हैं। यहां न ही किसी परस्पर संवाद की औपचारिकताओं को देखा जाता है, न ही व्यक्ति को व्यक्ति समझा जाता है। अनेकों बार तो राजपत्रित अधिकारी भी इनके 'तू, तड़ाके' के आगे असहाय प्रतीत होते हैं। आम कर्मचारी की तो इनके आगे बिसात ही क्या। खैर इंसाफ की लाठी तो सबके लिए समान होती है, कुछ वर्ष भाईगिरी करने के बाद जब वह चपरासी किसी सामान्य कार्यालय में पहुंचकर कर बाबूओं के बीच अपने मूल कार्य करता हुआ दिखता है, तो मन वह दृश्य देखकर प्रमुदित हो जाता है क्योंकि मुन्ना भाई को रामू काका बनते हुए देखने के सुख की पराकाष्ठा का आनंद ही अलग है।

स्थान, परिवेश, प्रसंग भले ही कुछ भी हो पर जीवन संबोधन सूचकों के बगैर अधूरा है। औपचारिक हो या अनौपचारिक परिवेश यह संबोधन सूचक सदैव अपने सद्भाव प्रसार के कार्य को बखूबी अदा करते हैं। भले ही व्यक्ति साधन सम्पन्न हो या नहीं इन सूचकों का आपस में समीचीन उपयोग ही मनुष्य के मनुष्यत्व के निखार के लिए आवश्यक है तथा इन सूचकों के बखूबी उपयोग से ही सभ्य, असभ्य, मनुष्य व असुर में भेद किया जा सकता है।

अष्टांग योग

आचार्य प्रेम प्रभु
कार्मिक एवं प्रशिक्षण विभाग, देहरादून

योग की वृहत परम्परा में ज्ञान योग, कर्म योग, भक्ति योग, मंत्र योग और तंत्र योग जैसे विभिन्न प्रकार के योग मार्ग सम्मलित हैं। इन अनेकानेक मार्गों का विभिन्न योग–मार्गियों द्वारा उनकी अभिरुचि, पूर्ण जन्मों के संस्कार एवं साधनात्मक स्तर आदि के आधार पर अनुसरण किया जाता है। योग के अद्वितीय ग्रंथ योग–सूत्र में महर्षि पतंजलि योग की प्राप्ति हेतु अष्टांग मार्ग को उपदिष्ट करते हैं। अष्टांग शब्द का अर्थ है 'आठ अंग'। अर्थात् योग का वह मार्ग जिसमें आठ क्रमबद्ध चरण सम्मिलित हैं, अष्टांग योग कहलाता है।

यमनियमासनप्राणायामप्रत्याहारधारणाध्यानसमाध योऽष्टावङ्गानि॥ (पातंजल योग–सूत्र २:२६)

यम, नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान और समाधि ये अष्टांग योग के आठ अंग हैं, जो वास्तव में अष्टांग योग के आठ क्रमबद्ध चरण हैं।

चूँकि योग साधना का प्रारंभ साधक की अंतःकरण की शुद्धि से होता है। यह साधना के स्थूल चरणों जैसे आसन–प्राणायाम आदि में प्रवृत होने से पूर्व आवश्यक भूमिका और योग सिद्धि हेतु आवश्यक योग्यता भी है।

(1) यम– ये धारण करने योग्य वे सार्वभौमिक एवं सार्वकालिक गुण हैं जो पंच महाव्रत कहलाते हैं। अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य और अपरिग्रह ये पाँच यम कहे गए हैं।

अहिंसा– कर्म, वाणी और मन से हिंसा का परित्याग

सत्य– अंदर के अनुरूप ही बाहर से अभिव्यक्त रहना

अस्तेय– कर्म और मन से स्तेय (चोरी) का परित्याग

ब्रह्मचर्य– ब्रह्म की प्राप्ति के हेतु और ब्रह्म के ही

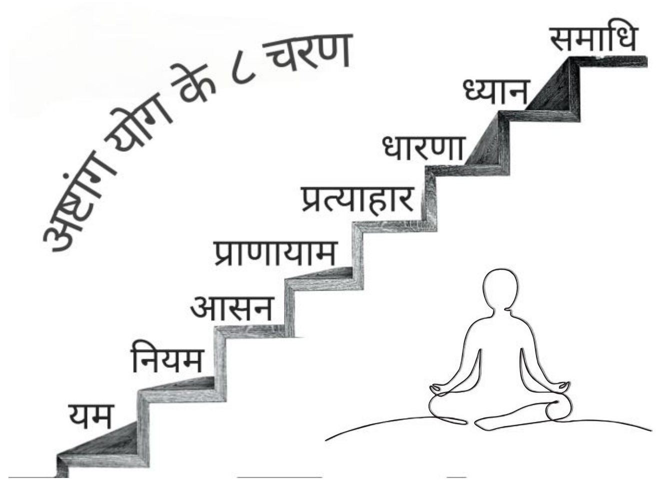

अनुरूप आचरण को धारण करना।

अपरिग्रह– आवश्यकता के अतिरिक्त सभी प्रकार की वस्तुओं में परिग्रह (संग्रह) का मन से परित्याग अर्थात् चेतना का किसी भी अनावश्यक विषय–वस्तु में संलिप्त ना होना।

(2) नियम– शौच, संतोष, तप, स्वाध्याय तथा ईश्वर–प्रणिधान ये पाँच नियम कहलाते हैं।

शौच– नित्य शारीरिक व मानसिक शुद्धि बनाए रखना।

संतोष– प्राप्य–अप्राप्य में संतुष्टि का भाव बनाए रखना।

तप– जीवन की प्रतिकूल परिस्थितियों में विचलित ना होना अर्थात् समता का अभ्यास करना।

स्वाध्याय– स्व का अध्ययन अथवा मुक्ति की ओर जाने वाले शास्त्रादि का अध्ययन।

ईश्वर प्रणिधान– स्वयं का परम सत्ता के प्रति समर्पण।

(3) आसन– पतंजलि स्थिरता, और सुखपूर्वक बैठने की स्थिति को आसन कहते हैं। पतंजलि किसी आसन विशेष की बात नहीं करते, वे केवल योग साधना हेतु आवश्यक आसन की सिद्धि की बात करते हैं। योग के अन्य मार्गों जैसे हठयोग आदि में सिद्धासन, पद्मासन, और स्वस्तिकासन आदि अनेकों प्रकार के आसन वर्णित हैं।

(4) प्राणायाम– साँसों की सामान्य गति को अवरुद्ध करने की प्रक्रिया प्राणायाम है, पतंजलि एवं हठयोग के महत्वपूर्ण ग्रंथों के अनुसार साँसों को रोकने की क्रिया अथवा कुम्भक को प्राणायाम कहा है। पतंजलि प्राणायाम के चार भेदों (बाह्यवृत्ति, आभ्यंतरवृत्ति, स्तम्भवृत्ति और बाह्याभ्यन्तरविषयाक्षेपी) का वर्णन करते हैं। हठयोग ग्रंथों में सूर्यभेदी, भस्त्रिका, भ्रामरी और केवली आदि विभिन्न प्रकार के प्राणायाम उपदिष्ट हैं।

(5) प्रत्याहार– "प्रत्याहार" का शाब्दिक अर्थ है, "प्रति+आहार", अर्थात् आहार के ठीक विपरीत।

सामान्यतः मनुष्य की समस्त इंद्रियाँ अपने–अपने विषयों के आहार के प्रति स्वभावतः उन्मुख रहती हैं, जबकि एक योग साधक का लक्ष्य अंदर होने के कारण उसे अपनी सारी ऊर्जा अंतर्मुखी करनी होती है, अतः समस्त अनावश्यक बाहरी विषयों से अपनी चेतना को विमुख करने का प्रयत्न प्रत्याहार है, ताकि अंतर्लक्ष्य प्राप्ति हेतु समस्त ऊर्जा को ध्यान आदि की ओर उन्मुख किया जा सके।

(6) धारणा– यह ध्यान की पूर्व अवस्था है, जिसमें योग साधक अपने चित्त को किसी ध्येय (ध्यान हेतु चुनी गयी विषय–वस्तु) पर एकाग्र करने का प्रयास करता है।

(7) ध्यान– जब चित्त अपने ध्येय में निर्बाध रूप से लम्बी अवधि तक बने रहने में सफलता प्राप्त कर लेता है, तो यह स्थिति ध्यान कहलाती है।

(8) समाधि– ध्यान का अगला चरण जिसमें ध्याता का (ध्यान करने वाले का) निज स्वरूप शून्य सा हो जाता है, केवल ध्येय ही शेष रह जाता है, समाधि है। अर्थात् जब ध्याता को अपने होने की प्रतीति और मेरे द्वारा ध्यान किया जा रहा है, यह दोनों ही भाव तिरोहित हो जाते हैं, और उसका ध्येय में ही एकाकार हो जाता है, ऐसी उत्तम स्थिति को समाधि कहा जाता है। एक योग साधक समाधि के भी विभिन्न चरणों से अग्रसर होता हुआ अंततोगत्वा निर्बीज नामक समाधि की अवस्था को प्राप्त होता है। जो कि इस मार्ग के साधक का अंतिम गंतव्य होता है।

अष्टांग योग का प्रयोजन– अष्टांग मार्ग प्रारम्भिक स्तर के योग साधकों के लिए सुनियोजित मार्ग है, जिसमें वह क्रमबद्ध रूप से विभिन्न चरणों से होकर योग की यात्रा करता है। अष्टांग योग का अंतिम लक्ष्य योगावस्था को प्राप्त करना है, जहां चित्त के समस्त कार्य–व्यापार अथवा वृतियाँ निरुद्ध अवस्था को प्राप्त हो जाती हैं, और समाधि की अवस्था को प्राप्त योगी में विवेक ज्ञान का उदय होता है, उसके क्लेश आदि कर्मों के मूल अथवा समस्त बीज निर्बीज हो जाते हैं, वह अपने वास्तविक दृष्टा स्वरूप को प्राप्त हो जाता है, एवं प्रकृति के प्रपंचों से स्वतंत्र निज–स्वरूप (कैवल्य) को जान लेता है। एवं वह सभी प्रकार के दुखों के ताप से मुक्त हो जाता है। अतः अष्टांग मार्ग सहित योग के समस्त मार्गों का अंतिम लक्ष्य समस्त प्रकार के दुखों की आत्यांतिक निवृत्ति एवं मुक्ति रूपी परम पद को प्राप्त करना है।

ज्योतिषशास्त्रः मेरा अनुभव

छवि पन्त
वा.हि.भू. संस्थान, देहरादून

चित्र साभार: http://www.astroblessings.com/article/2018/5/jyotish-shastra-a-vedanga/20368/

"ज्योतिष" शब्द को सुनते ही सामान्यतः जो प्रथम विचार आम जन–मानस में आता है वह है अपने भविष्य में होने वाली घटनाओं को निश्चित रूप से जान जाने की जिज्ञासा, और उसको निश्चित कर लेने कि इच्छा। परन्तु क्या यह ही ज्योतिष शास्त्र की रचना का या मूल उद्देश्य था? मैंने अनुभव किया है कि सामान्यतः जो लोग ज्योतिष को पाखंड कहते दिखाई पड़ते हैं, और न जाने कितने तर्क– कुतर्क से अपनी बात को सिद्ध करने का प्रयत्न करते हैं, वही लोग जब किसी मुसीबत में अथवा कठिन परिस्थिति में होते हैं और कोई रास्ता नहीं सुहाता तो या ग्रह–नक्षत्रों को या विधाता को दोष देते दिखते हैं, तथा किसी ज्योतिषी के पास जाकर समाधान ढूंढ़ने का प्रयत्न करते हैं। ऐसा द्विचरित्र क्यों ? किसी भी विषय को प्रामाणिक या अप्रामाणिक कहने से पूर्व सत्यता को जान लेना उचित है ऐसा विचार कर अपनी जिज्ञासा को शांत करने हेतु मैंने ज्योतिष शास्त्र को समझने के लिए विषय सम्बंधित साहित्य सर्वेक्षण करना प्रारम्भ किया। जिस प्रकार सूर्य पर छींटाकशी करने से सूर्य पर कोई प्रभाव नहीं होता उसी प्रकार ज्योतिष शास्त्र (या किसी भी अन्य शास्त्र/पुस्तक/विधा) पर बिना बौद्धिक/तार्किक अध्ययन, मनन, चिंतन व विद्वानों से प्राप्त ज्ञान के बिना कोई भी अवधारणा बना लेना उचित नहीं, चाहे वो पक्ष में हो या विपक्ष में ऐसा मेरा व्यक्तिगत मत है। इस विचार के साथ मैंने जिज्ञासावश ज्योतिष को समझने का प्रयास करने का निश्चय किया। सर्वप्रथम जो भी कुछ उपलब्ध जानकारी प्राप्त हुई उसका अध्ययन करने का प्रयत्न किया। वर्तमान में ज्योतिष को समझने की कई पद्यतियाँ प्रचलन में हैं परन्तु मैंने अपना अनुसंधान प्राचीनतम उपलब्ध साहित्य के अध्ययन से करने का विचार किया। मैं संस्कृत भाषा व व्याकरण में पारंगत नहीं हूँ तथा मेरी इस भाषा में पकड़ न्यून है, अतः अपनी जिज्ञासा को शांत करने हेतु इस विषय के विशेषज्ञों द्वारा हिंदी भाषा में अनुवादित पुस्तकों का आश्रय लिया।

अपनी खोज में मैंने पाया कि ज्योतिष शास्त्र का

उद्‌गम या उल्लेख विश्व के प्राचीनतम साहित्य अर्थात वेदों में मात्र वर्णित ही नहीं है अपितु यह शास्त्र स्वयं वेदांग है । **छन्दः पादौ तु वेदस्य हस्तौ कल्पोऽथ पठ्यते, ज्योतिषामयनं चक्षुर्निरुक्तं श्रोत्रमुच्यते। शिक्षा घ्राणं तु वेदस्य मुखं व्याकरणं स्मृतम् तस्मात्सांगमधीत्यैव ब्रह्मलोके महीयते॥** (प्रस्तुत छंद में, छन्द को वेदों का पाद, कल्प को हाथ, ज्योतिष को नेत्र, निरुक्त को कान, शिक्षा को नाक, व्याकरण को मुख कहा गया है)।

"वेदस्य निर्मलं चक्षुः ज्योतिषशास्त्रमकल्मषं, विनैतदखिलं श्रोतं स्मार्तंन कर्मं न सिद्वयति" (अर्थात् ज्योतिष वेद का निर्मल चक्षु है, जो अकल्मष है, और इसके ज्ञानाभाव में समस्त वेद प्रतिपाद्य विषय यथा श्रोत, स्मार्त्त, यज्ञ आदि क्रियायें संपन्न नहीं की जा सकती)।

ज्योतिष की शास्त्र सम्मत परिभाषा ज्योतिष्मतांग्रह–नक्षत्रादीनांगतिंस्तिथिश्चाधिकृत्यकृतंशास्त्रम् (अर्थात् प्रकाशमान ग्रह–नक्षत्रों इत्यादि की गति और स्थिति का कलन? या ज्ञान से सम्बंधित शास्त्र) पर ध्यान देने पर मैंने पाया कि वेद की इस विधा का मूल मात्र भविष्य कथन नहीं था। यह कथन वर्तमान में खगोल विज्ञानं कि परिभाषा के अत्यंत निकट है। अन्यत्र मैंने पाया **''ग्रहगणितम ज्योतिषम्''** (अर्थात ग्रहों कि गति के गणित को जिस शास्त्र में अध्ययन किया जाता है वह ज्योतिष शास्त्र है)। **"ज्योतिषा सूर्यादिग्रह्याणां वोधक शास्रम्"** (अर्थात् सूर्यादि ग्रह और काल का बोध कराने वाले शास्त्र को ज्योतिष–शास्त्र कहा जाता है) यहाँ यह स्पष्ट है कि ज्योतिष–शास्त्र की व्युत्पत्ति आकाशीय पिंडों के अध्ययन हेतु हुई थी।

"यत् पिंडे तत् ब्रह्माण्डे" (अर्थात् जो एक पिंड में है, वही ब्रह्माण्ड में है) वैदिक परंपरा का मूल आधार रहा था। भारतीय परंपरा मैं दर्शन शास्त्र को सबसे अधिक महत्व दिया गया था, तदानुसार मनुष्य यदि स्वयं को जान ले तो सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड को जान सकता है। इसका विपरीत भी उतना ही सत्य है इस अवधारणा के आधार पर स्वयं को जानने हेतु दृश्य ब्रह्माण्ड (यहाँ ब्रह्माण्ड से तात्पर्य दृश्य आकाश से है) का अध्ययन किया गया होगा ऐसा मुझे जान पड़ता है। आध्यात्मिक पक्ष के अतिरिक्त भौतिक दृष्टि से भी देखें तो पृथ्वी पर जीवन का होना हमारे सौर मंडल के निश्चित व्यवस्था में स्थापित होने से ही संभव है। वर्तमान कालखंड में जब विज्ञान ने श्रेष्ठतम ऊँचाइयाँ प्राप्त की हैं, यह तो सर्वविदित ही है कि पृथ्वी पर ऊर्जा का श्रोत सूर्य है साथ ही दिन–रात का होना, विभिन्न ऋतुओं का होना, तथा अन्य जलवायु सम्बंधित जीवन उपयोगी प्रक्रियाओं को सम्पादित करने हेतु सम्पूर्ण सौर मंडल अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। अपनी खोज में मैंने पाया कि वैदिक काल खंड में भी ज्ञान– विज्ञानं अपने चरम सोपान में रहा होगा।

पृथ्वी के अपनी धुरी में घूमने के कारण दिन रात का होना, पृथ्वी द्वारा सूर्य की परिक्रमा से ऋतुओं का बदलना, चंद्रमा की पृथ्वी परिक्रमा से पूर्णिमा व अमावस्या, सूर्य ग्रहण और चंद्र ग्रहण की घटनायें , सौर मंडल के अन्य ग्रहों की पहचान आदि खगोलीय ज्ञान आज बहुत सरल जान पड़ता है, और प्राथमिक विद्यालय की पुस्तकों से हमको बचपन में ही मिल गया था, परन्तु यदि तनिक ध्यानपूर्वक विचार करें तो पाएंगे की ये सभी खोजें व गणनायें पृष्ठभूमि में उन प्राचीन वैज्ञानिकों (आचार्यों/ऋषियों) की तीक्ष्ण बुद्धिमता एवं अथक परिश्रम निहित है।

वर्तमान में यह ज्ञान सामान्य प्रतीत होता है और कोई चमत्कार नहीं जान पड़ता परन्तु आरम्भ में मनुष्य को चकित किया होगा प्रकृति की इन चमत्कृत करने वाली घटनाओं ने। गणना–सिद्धांत ज्योतिष का अनन्य और मूलभूत भाग है, और इसे ही बहुधा गणित नाम से संबोधित किया गया है, इसके बिना ज्योतिष की कल्पना ही नहीं हो सकती। पारिभाषिक रूप से '**सिद्धः अन्तः यस्य सः सिद्धान्तः**' अर्थात जिसका निगमन किया जा सके और प्रयोगात्मक रूप से सही सिद्ध हो, वह सिद्धांत है। गणित का आविष्कार भी ज्योतिष शास्त्र को समझने और सहज बनाने के लिए किया गया।

ऋतु ज्ञान जो ज्योतिष शास्त्र की एक शाखा थी,

मौसम सम्बंधित सही अनुमान द्वारा कृषकों के लिए अति उपयोगी सिद्ध हुई, तथा वही के कृषि ज्योतिष का उद्भव हुआ। कृषि–ज्योतिष संभवतः, ज्योतिष के सबसे पुराने रूपों में से एक है। वैदिक परंपरा में यज्ञ, हवन आदि कर्म–कांडों का विशेष महत्त्व था। वैदिक अनुष्ठान, विवाह, उपनयन संस्कार आदि शुभ अवसरों हेतु शुभ–मुहूर्त व उपयुक्त या अनुपयुक्त काल गणना के लिए ज्योतिष शास्त्र की ही एक धारा पंचांग रूप में अवतरित हुई। ज्योतिष शास्त्र ने न केवल स्थूल जगत का अध्ययन किया अपितु सूक्ष्म जगत अर्थात् मानव–मन को समझने हेतु मनोविज्ञान के क्षेत्र में भी अकल्पनीय योगदान दिया। सामान्यजन अपनी हर तरह की समस्या लेकर ज्योतिषाचार्य के पास आते थे, और उनकी करुणा के पत्र बन सदा समस्या का समाधान पाते थे। ज्योतिष शास्त्र मात्र सौर मंडल के पिंडो तक ही सीमित नहीं था, अपितु नक्षत्र–ज्ञान ज्योतिष शास्त्र की आधारशिला थी।

मुझे अंतर स्पष्ट हुआ कि भविष्यफल कथन और ज्योतिष में अंतर है। ज्योतिष का अर्थ जितना सामान्य लोग सोचते हैं ऐसा मैंने कदापि नहीं पाया। अक्सर समाचार–पत्रों में छपे स्तम्भलेख या किस्मत बताने का खेल तमाशा ज्योतिष शास्त्र नहीं है, अपितु उससे बहुत अधिक जटिल, दुरूह और धैर्य एवं कठोर परिश्रम का कार्य है। इसके बारे में हमारे पूर्वजों के विचारणा दृष्टि, उनके परिश्रम के विषय में सोचकर मैं आविर्भूव हो गयी और स्वयं को ऋणी व गौरवान्वित अनुभव करने लगी। प्राचीन ज्योतिष शास्त्र से सम्बिन्धित लाखों पांडुलिपियां मिली हैं। गणित, संस्कृत–भाषा एवं व्याकरण, दर्शन–शास्त्र में पारंगत विद्वान ही अतीत में ज्योतिषाचार्य होते थे, तथा समाज में उनके अति–विशिष्ठ गुणों के कारण उनका विशेष सम्मानित स्थान था। उदाहरणार्थ आर्यभट्ट जिन्होंने विश्वप्रसिद्ध 'सूर्यसिद्धांत' नामक ग्रन्थ की रचना की। विश्व प्रसिद्ध ज्योतिषचार्यों को सुनकर (इंटरनेट में उपलब्ध ऑनलाइन व्याख्यान द्वारा) मुझे यह जानकार भी अति प्रसन्नता एवं गर्व का अनुभव हुआ कि सम्पूर्ण विश्व में ज्योतिष–शास्त्र की अनेक विधाओं के प्रचलित होने पर भी वर्तमान परिपेक्ष में विश्व के सभी श्रेष्ठतम ज्योतिष–शास्त्र के विद्वान भारतीय वैदिक ज्योतिष परंपरा को ही शिरोमणि व आधार मानते हैं। पाश्चात्य जगत में किसी भी ज्योतिष विधा को बिना वैदिक–ज्योतिष शास्त्र के अधूरा माना जाता है, विशेषकर नक्षत्र ज्योतिष ज्ञान केवल वैदिक ज्योतिष परंपरा के द्वारा ही प्राप्त होता है, जिसके अध्ययन के बिना यह ज्ञान अधूरा है। प्रत्येक ज्योतिषाचार्य का सपना होता है कि वह वैदिक ज्योतिष–शास्त्र व नक्षत्र–ज्योतिष में पारंगत हो।

अब यदि मे अपनी मूलभूत प्रश्न की ओर लौटूँ तो अपने अनुसन्धान में मैंने पाया की सामान्यजन जो भविष्यकथन को ज्योतिष समझता है, वह तो मात्र ज्योतिष–शास्त्र रूपी सागर में एक जलबिंदु के सामान या हिमशैल की नोक के समकक्ष है। भविष्य–कथन, ज्योतिष शास्त्र का एक छोटा सा अंश है। अत्यंत श्रेष्ठ, तीक्ष्ण बुद्धि, प्रज्ञा एवं प्रतिभाशाली होने पर ही ज्योतिष–शास्त्र में पारंगत हुआ जा सकता है जो अत्पन्त दुरुह है। वैदिक ज्योतिष शास्त्र से जीवन का कोई भी पक्ष अछूता नहीं था, चाहे सूक्ष्म जगत हो या स्थूल जगत, इसमें सब कुछ समा जाता है, परन्तु कमी है तो शायद हम जैसे आमजन की समझ में, साथ ही आज के वर्तमान समय में सत्यनिष्ठा ज्योतिषाचार्यों की संख्या में कमी।

मुझे मेरे प्रारंभिक अनुसंधान ने ज्योतिष शास्त्र के प्रति एक नया दृष्टिकोण दिया, तथा निकट भविष्य में अपने अध्ययन को जारी रखने हेतु प्रेरणा दी। स्नातक स्तर में मैं गणित की छात्रा थी और खगोल विज्ञान मेरा चयनित विषय था। आधुनिक खगोल विज्ञानं विषय में मेरा प्रारंभिक ज्ञान होने के कारण ज्योतिषीय–गणित के आधारभूत नियमों को आत्मसात करना मेरे लिए सहज हो पाया।

ज्योतिष शास्त्र की श्रेष्ठता व भव्य इतिहास का अवलोकन करने के पश्चात यह प्रश्न स्वाभाविक रूप से मेरे मानस पटल में आया कि वर्तमान में ज्योतिष क्यों असफल है ??? वर्तमान कालखंड में ज्योतिष की

असफलता का मुख्य कारण संभवतः प्राचीन प्रामाणिक शास्त्रीय ग्रंथों की उपेक्षा, विद्वान ज्योतिषचार्यों का आभाव, नवीन अप्रमाणिक (मनगढंत) अवधारणाओं व मान्यताओं का ज्योतिष में अनुपयोगी समावेश, व इस अलौकिक ज्ञान का बाजारीकरण। सत्य को कह और सुन पाने के धैर्य व साहस की कमी एवं मन के अनुसार तथ्य को तोड़ मरोड़ का प्रस्तुत करने के कारण संभवतः आज के समय में ज्योतिष शास्त्र ने अपनी गरिमा खो दी है। ज्योतिष के कुछ मौलिक ग्रंथों का परिचय इस प्रकार है:— बृहद्सहिता, ग्रहस्पष्टीकरणम, वृहद्पराशरहोराशास्त्र, पौराणिक ज्योतिष, श्रीनारदसंहिता, जैमिनिसूत्रम, बृहद्जातकं, सारावली, सूर्यसिद्धांत, सिद्धांतशिरोमणि, कृषिपराशरः, धरभ्रम, चरकसहिता,आदि (https://youtu.be/Ot_&5LU54N1Y)। इन पुस्तकों के अध्ययन के पश्चात ही किसी को ज्योतिष के विषय में कुछ कहना चाहिए। मुझे विश्वास है की कुछ पुस्तकों की केवल प्रस्तावना मात्र को पढ़कर ही ज्योतिष के प्रति एक नया दृष्टिकोण मिल सकता है।

प्रकृति का स्वर्ग चकराता: एक शांत एवं आत्मचिंतन स्थल

गोपाल वैदैस्वरन
सांई लोक, देहरादून

मेरी धर्मपत्नी अक्सर मुझे कुछ न कुछ लिखने के लिए प्रोत्साहित करती रही है। विगत में, मैं एक अच्छा होटल व्यवसायी रहा और इस क्षेत्र में मैंने अथक परिश्रम किया। पर्यटन उद्योग में बिना कोई अल्पविराम लिए मैं निरंतर 28 वर्षों तक कार्यक्षेत्र में मुस्तैद रहा, जिसमें 10 साल इंडियन एडवेंचर्स वाइल्डलाइफ रिसॉर्ट्स के साथ और बचे 18 साल चुनिंदा होटलों के साथ कार्य में व्यतीत किए। सेवाअवधि के प्रथम दौर में, सेल्स एंड मार्केटिंग से जुड़ा रहा और जब अंत में अपने त्यागपत्र के समय मैं वाइस प्रेसीडेंट (ऑपरेसन्स) के पद पर था। कार्य में अति व्यस्तता के कारण अधिकांशतः कई बार हम अपनी सेहत का ख्याल रखना भूल जाते हैं। अपने जीवनकाल में मुझे दो बार हृदयाघात हुआ, जिसने मुझे अब अपने घर तक ही सीमित कर दिया है। पिछले दो सालों में मुझे अब यह अहसास होने लगता है कि हर कोई यह समझने लग गया है कि घर तक सीमित रहना कैसा होता होगा। लेकिन अब मुझे घर में कैद हुए चार साल हो चुके हैं।

कोविड महामारी के बाद, सभी के लिये अवसर सीमित हुये हैं तो मैं अपने लिये क्या सोचूँ। घर में रहते हुये मैं क्या करूं, मैं अपने हालातों को कैसे नियंत्रित करूं। इसी उधेड़बुन में समय निकल रहा था। मन निराशा से भरा हुआ था। ऐसे समय, मेरी धर्मपत्नी का कुछ लिखने के सुझाव में मुझे आशा की किरण दिखायी दी। उसने मुझे याद दिलाया कि पूर्व में मैं एक अच्छा पाठक रहा हूँ, काफी घूमा हूँ तो क्यों ना एक यात्रा ब्लॉग लिखूँ, जिसे हमारी बेटी पढ़ कर गर्व कर सके। मैं हर दिन कुछ न कुछ लिखने की कोशिश करता रहता हूं। कभी–कभी यह मुझे काफी नीरस और भी ज्यादा हतोत्साहित करता है। यदा–कदा मैं कहीं विचारों की स्मृतियों में विचरण करने लग जाता हूं। मुझे अवसाद रूपी दौरे बार–बार आते रहते हैं और इस दौरान पढ़ने व लिखने की प्रक्रिया आत्मीय रूप से मेरी अदम्य सहायता करती है। मेरी आत्मा के अंदर से कुछ न कुछ लिखने का प्रयास कदाचित लघु गद्याशों के रूप में कागज पर उतर ही आता है।

ऐसे ही एक उदासी भरे एक दौर में, मेरे परिवार ने एक छोटा–सा ब्रेक लेने का फैसला किया और हम ऐसे हिल स्टेशन की ओर निकल गए, जो सामान्यतः अधिकांश लोगों की पहली पसंद नहीं होता। यह पर्वतीय कस्बा अभी–अभी लोकप्रिय होना शुरू हो रहा है।

बरसात के मौसम की शुरुआत थी और गर्मी की छुट्टियां खत्म होने जा रही थी। ऐसे में हमें बताया गया कि रिसॉर्ट से लोगों का आखिरी हुजुम अपने गंतव्यों की ओर जा रहा था। देहरादून से तीन घंटे की छोटी ड्राइव पर, हमने देहरादून–चंडीगढ़ राजमार्ग को छोड़ने के बाद लांघा रोड से गुजरते हुए सुंदर सड़कों से अपनी यात्रा की। हम देश के एक प्रदूषण मुक्त भाग में आ गए थे, देवदार के पेड़ों के हरे भरे सदाबहार जंगल से घिरे हुए स्थान में हम सांसारिक व आत्मिक चिंताओं से मुक्त स्वच्छंद विचरण कर रहे थे।

मेरी बेटी सड़क यात्रा में सहज नहीं होती है। इसलिए, हम उसे रास्ते में थोड़ा–थोड़ा चलाने के लिए कई बार रुके। मेरी पत्नी द्वारा उसे साहचर्य प्रदान किया गया और पुत्री का ध्यान भटकाने के लिए क्षेत्र के भूविज्ञान के बारे में उसने आसान शब्दों में बताया। असल में, मेरी पत्नी कभी भी भूविज्ञान के बारे में बात करने का मौका ही नहीं छोड़ती, भले वह सुनने वाला

कोई भी हो। देहरादून शहर के मित्रों के साथ होने वाली हमारी पिकनिक्स भी हमारे समूह के बच्चों के लिए ऐसी भूविज्ञान विषय संबंधित कक्षाओं से समृद्ध होती हैं। वह बता रही थी कि कैसे कई युगों पूर्व सड़क के किनारे की पूरी चट्टानें समुद्र के नीचे निर्मित हुई थीं। मेरी बेटी हमेशा ही कुछ नया सीखने के लिए उत्सुक रहती है। जिस प्रकार से वह प्रकृति से प्रेम करती है, वह वास्तव में किसी दिन एक भूविज्ञानी बन सकती है। लेकिन मैं अपने दुर्बल शरीर के साथ ज्यादा चल नहीं सकता और मैंने हरे देवदार वनों, धुंधली पहाड़ियों, आसमान में बादलों और ताजी हवा का आनंद लेना पसंद किया। हर बार जब हम रुकते थे, तो मैं अत्यधिक घुमावदार सड़कों और सुंदर पहाड़ियों को अपने में आत्मसात करता था, जो विभिन्न स्थानों के पर्यटकों के झुंड से मुक्त बिल्कुल शांत थी।

शांत चकराता शहर के पास पहुँचने पर हमने किमोना की ओर जाने वाली सड़क का रूख किया। रिसोर्ट के मैनेजर ने गेट पर हमारा गर्मजोशी से स्वागत किया, जहां हमें रुकना था। मुझे रिसॉर्ट का पहला दृश्य पसंद आया, जो अपने प्राकृतिक परिवेश में मिश्रित था, बहुत ही सरल, लेकिन फिर भी गर्म और आरामदायक। हम, साहिया में कैप्टन चेतन चौहान से मिले, जब वह दिल्ली जा रहे थे। हम उस दिन के लिए रिसोर्ट में ठहर गए।

अगली सुबह बालकनी से दिखने वाला नजारा मंत्रमुग्ध कर देने वाला था। मुझे अपनी सुबह की कॉफी का सेवन बाहर करना सहज लगता है और होटल की बालकनी से यह नजारा देखने लायक था। ठीक सामने लंबा रिज, आगे एक विचित्र गाँव और रिसोर्ट से गुजरने वाली एक छोटी घुमावदार सड़क बहुत ही शांत लग रही थी। हम उस दिन लोखंडी गए थे। मेरी भूवैज्ञानिक पत्नी मेरी बेटी को पुनः स्ट्रोमेटोलाइट्स दिखाना चाहती थी। ऐसा लगता है कि स्ट्रोमेटोलाइट्स पृथ्वी पर पहले जीव थे। लोखंडी के आगे कानासर में एक छोटा सा मंदिर मुझे पसंद आया। वहां के पुजारी ने मुझे बताया कि इस जगह को जौनसार कहा जाता है, और यह महाभारत से संबंधित है। ऐसा प्रतीत होता है कि द्रौपदी जौनसार की निवासी थी। एक आदमी मंदिर के पास कुछ ताजे, मीठे, रसीले बेर बेच रहा था और हमने उससे कुछ बेर खरीदे। मंदिर के चारों ओर विशाल वृक्ष थे। उन पेड़ों के तने कई मीटर मोटे थे। चलने या केवल सुखद अनुभूति के लिए बैठने की यह कितनी सुंदर जगह थी।

यात्रा के शुरु होने के बाद से, मेरी बेटी की इच्छा थी कि वह टाइगर फॉल नामक प्रसिद्ध झरने को देखने चले। झरनों का दृश्य भव्य था। वहां कुछ ही लोग थे, जो जल्दी से चले गए और मेरी बेटी के जीवन का यह प्रथम दिन था जब उसने झरने के नीचे कुण्ड में तैराकी की। हालांकि पानी का स्तर काफी कम था, फिर भी मैं अपनी बेटी के इस तैराकी भरे साहसी कारनामे के लिए उसे सलाम करना चाहूंगा।

दिन ढलने पर जब हम वापस रिसोर्ट लौटे तो हमें श्री उदय ने बताया कि चौहान परिवार के घर से हमारे लिए एक विशेष जौनसारी भोज तैयार किया जा रहा है। हम उनके प्रति कृतज्ञता से भर गए थे। तत्पश्चात, जब हमने चकराता क्षेत्र के राजमा के साथ पहाड़ी लाल चावल और छाछ से पकाई एक स्थानीय नदी की मछली वाले भोजन का स्वाद चखा। भोजन के साथ भांग जीरा व उनकी गायों का शुद्ध घी था। इस भोजन का सेवन एक काफी सुखद अनुभूति थी। मैंने इससे पहले अपने जीवन में पहाड़ी खाना शायद ही कभी चखा हो। यह भोजन अति—उत्तम था। सबसे अच्छी बात यह थी कि हमारी बेटी, जो बहुत शरारती है, उसने भी खाना पसंद किया, और थोड़ा सा भोजन और परोसने की फरमाइश की। उसने मांग की कि अगले दिन नाश्ते के लिए बचा हुआ भोजन उसे परोसा जाए। मुझे काफी लंबी समयावधि के लिए यह भोजन याद रहेगा।

अगली सुबह हम वापस देहरादून के लिए रवाना हुए। इस यात्रा ने मुझे आत्मनिरीक्षण करने के लिए बहुत सारे विचार दिए। मेरा सारा जीवन यात्रा, पर्यटन और आतिथ्य उद्योग में व्यतीत हुआ है। जब भी मनुष्य

ने चकराता जैसे प्राचीन रमणीय स्थानों पर कदम रखा है, हमने उस स्थान का पूर्णतः विदोहन देखा है। ऐसे में, उस स्थान की पवित्रता पूर्णतः नष्ट हो जाती है। पर्यटकों की मांग के अनुरूप, उनके लिए कम्फर्ट फूड होटलों में, छोटे और बड़े रेस्तरां में हर जगह अधिकाधिक पर्यटक प्रिय खाद्य पदार्थ परोसे जाते हैं। इससे लोगों की स्थानीय खान–पान संबंधित आदतें बदल जाती हैं। मूलतः, लोग संवहनीय खाद्य पदार्थों और रहने की आदतों पर निर्भर होते हैं। ऐसे परिवर्तनों के साथ, एक बाह्य परिवेश से आयातित अनुकूलन का आगमन होता है जो अदृश्य रूप से स्थानीय लोगों के लिए आजीविका के अर्जन को दुष्कर बना देता है और वे लोग अंततः आस–पास के शहरों में प्रवास की राह अपनाते हैं। जो शेष बचता है – वह है फास्ट फूड, चाय – मैगी – मोमो स्टॉल, जिनका मूल स्थान से कोई वास्ता नहीं है।

जिस रिसोर्ट में हम ठहरे, वह एक प्राचीनतम होटल है, जिसके स्वामी जौनसार के समृद्ध लोगों में से एक हैं। मैं उनकी सराहना करता हूं कि वे यह समझ गए हैं कि उस जगह के स्थानीय चरित्र को बनाए रखना आवश्यक है। रिसॉर्ट, हालांकि आरामदायक है पर भव्य नहीं है। स्वच्छता, बगीचों में उगे खाद्य पदार्थों से बना खाना, गर्मजोशी से स्वागत और सेवा सत्कार, रात में सॉफ्ट लाइट्स की उपस्थिति को ध्यान में रखते हुए भी उन्होंने खुद को वातावरण से जोड़े रखा है। लेकिन मैंने देखा कि हर जगह बहुत सारे छोटे होटल, होम–स्टे और कैंप बन रहे हैं। बढ़ते पर्यटन के साथ छोटे या बड़े स्थान उभर कर सामने आयेंगे। अनेकों लोगों के लिए संस्कृति, विरासत को बढ़ावा देना और एक ही समय में संवहनीय होना कठिन है। अनेकों लोगों ने इस अवधारणा को नहीं समझा है या संवहनीय बने रहे की कोशिश में व्यापार को जीवित रख पाने की क्षमता उनमें नहीं होती है।

हेरिटेज विलेज रिजॉर्ट एंड स्पा., मानेसर जहां मैंने 18 वर्ष कार्य किया, वह एक शहरी होटल था। होटल प्रबंधन की मंशा हमेशा राजस्व अर्जित करने में अधिक थी जो ज्यादातर बिजनेस क्लास ग्राहकों की आवश्यकता को पूरा करती थी। यह एक महानगरीय होटल था। लेकिन, कान्हा, बांधवगढ़, रणथंभौर और दांदेली में चार रिसॉर्ट्स को मिलाकर भारतीय एडवेंचर्स रिसॉर्ट्स भारत के कुछ प्रसिद्ध राष्ट्रीय उद्यानों में अवस्थित होने के कारण प्रकृति के काफी करीब था। इस रिजॉर्ट में मेहमानों की संख्या कम थी, लेकिन बड़ी संख्या में तैनात आतिश्य सेवा कर्मचारी पर्यटकों की व्यक्तिगत आवश्यकताओं पर ध्यान देते थे। लेकिन अधिक भुगतान वहन क्षमताओं के एक बड़े ग्राहक वर्ग के होने के कारण, व्यवसाय को बनाए रखने के लिए अर्जित राजस्व पर्याप्त था। लेकिन इसके विपरीत जौनसार में, हमें यह समझना होगा कि किस स्तर के पर्यटक नाजुक पारिस्थितिकी तंत्र को कायम रखने के लिए अधिक लागत के भुगतान में समर्थ हैं, और साथ ही व्यापार को चलायमान बनाने के लिए आवश्यक हैं। इस संदर्भ में, भूटान की तरह एक 'संवहनीयता शुल्क' के लागू किए जाने से 'न्यूनतम संख्या, उच्चतम मूल्य' वहन कर सकने वाले पर्यटकों को इस स्थान पर आने दिया जा सकता है। क्योंकि अंततः, मैं यह सोचकर दहल जाता हूं कि यह प्राचीन स्वर्ग मसूरी की तर्ज पर नष्ट न हो जाए।

ताड़केश्वर शिव धाम चलें इस बार

एन.के. जुयाल
वा.हि.भू. संस्थान, देहरादून

कोटद्वार (जनपद–पौड़ी गढ़वाल) से लगभग 70 किलोमीटर की दूरी पर स्थित देवदार, बॉज, बुराँस के जंगलों से घिरी एक ऐसी मनोरम जगह है, जहाँ का मौसम आमतोर पर पूरे साल खुशनुमा ही रहता है।

यहाँ के घने देवदार, बॉज, बुराँस के जंगलों में घूमना इतना रोमांचकारी है कि तन और मन फिर से जीवंत हो उठते है। अगर आप हरियाली से सराबोर शिव मदिंर की सुंदरता का आनंद लेना चाहते हैं, तो यह जगह एकदम सही हैं। इस जगह की खूबसूरती आप जिंदगी भर याद करेंगे।

बद्रीनाथ, केदारनाथ, गंगोत्री, यमुनोत्री जैसे मंदिरों, पर्यटन स्थलों में प्रवेश करने के लिए गाड़ियों की लंबी कतारें देखते ही मन ऐसी जगह की तलाश में लग जाता है, जहाँ प्रकृति की अलौकिक सुंदरता, खुलापन, हरियाली, एकांत और जीवन की सौम्यता व सादगी अभी बाकी हो। इसी सोच के साथ मैंने ताड़केश्वर शिव धाम की ओर रुख करने का फैसला किया क्यों कि यह आर्कषक और अनूठी जगह कोटद्वार–लैन्सडाउन– रामनगर मार्ग पर लैन्सडाउन से लगभग 33 किलोमीटर की दूरी पर बसा है। जिम नेशनल कार्बेट पार्क की पहाड़ियों में स्थित एक हरा भरा क्षेत्र है जो कि लगभग 5000 फीट की ऊँचाई पर स्थित है।

ताड़केश्वर शिव धाम की यात्रा करना वाकई मेरे लिए शानदार अनुभव था। हरियाली से भरपूर पर्वतमालाऐं, उड़ते ठिठकते बादल, कुदरती औषधि युक्त किस्म–किस्म के पेड़–पौधे, कुदकते पक्षियों के बीच का वातावरण आपको एकदम से तरोताजा करने के लिए काफी हैं। पगडंडी के किनारे कतार में लगे देवदार के पेड़ सौम्यता का कैनवस रचते हैं। कितने ही मोड़ों पर जिन्दगी पिकनिक हो जाती है। जिसमे कैमरा अपनी भूमिका खूब निभाता है। सड़क से दूर दिखते पहाड़ी घरौंदे यहाँ की सुन्दरता को और बढ़ाते हैं। यहाँ फर्न की कई प्रजातियाँ, जड़ी बूटियाँ, जंगली फूल, आड़ू, प्लम, नाशपाती, कीनू, ओर कहीं पर सेब के पेड़ आपको अपनी ओर खींचते है।

यहाँ तो हरी–भरी पहाड़ियों के बीच टहलने का अपना एक अलग ही मजा है। जिसका अनुभव यहाँ आकर ही मिल सकता है। क्यों कि यहाँ का मौसम हमेशा सुहावना रहता है। इसके अतिरिक्त यहाँ पर वन्य जीवों की भी भरमार है। यहाँ आसपास के जंगलों में हिरण, बाघ, रीछ, काकड़, सियार, जंगली सुअर, लंगूर, बन्दर, आदि दिन तथा रात में भी दिखाई देते हैं।

यहाँ आकर आप ट्रैकिंग भी कर सकते हैं यदि आप

एडवेंचर के शौकीन हैं। इसके लिये आपको गुड़िलखेत से सीधे आधारियाखाल का पुराना पैदल मार्ग पर जाना होगा, जो कि बहुत ही मनमोहक ट्रेक है, 'शायद ऐसे ट्रेक पर आप पहली बार चल रहे होंगे। इस ट्रेक पर आप ग्रुप में जायें क्यों कि यहाँ जंगली जानवरों का भय रहता है। यदि आप अपने आरामगाह को थोड़ा रोचक बनाना चाहते हैं तो लैन्सडाउन–रामनगर रोड़ पर 10 से 15 किलोमीटर की दूरी पर अगरोड़, आधारियाखल, सिसल्ड़ी नामक जगह पर आपको अच्छे होटल मिल जायेंगे। यहाँ वन विभाग का गेस्ट हाउस भी है। जिसकी बुकिंग ऑनलाइन हो सकती है। आसपास में भी कुछ रिसॉर्ट्स हैं, जहाँ आप ठहर सकते हैं। यहाँ आने से पहले इन बातों का ध्यान जरूर रखें। यह एक छोटी सी जगह है, जहाँ आसपास ज्यादा दुकानें नहीं है। इसलिए यहाँ आयें तो साथ में मिनरल वॉटर, कुछ स्नैक्स और दवाइयाँ भी रख लें। पसंद की खाने–पीन का सामान साथ ले जाना ज्यादा सुविधापूर्ण और रुचिकर रहेगा। ऐसी भी मान्यता है कि ताड़केश्वर शिव धाम में सिर पर सरसों का तेल लगाकर व साल के पत्ते को मंदिर परिसर में ले जाना वर्जित माना जाता है।

ताड़केश्वर शिव धाम में आकर आध्यात्मिक रुप से मन को शांति मिलती है। क्यों कि मंदिर 5000 फीट की ऊँचाई पर होने के बाबजूद यहाँ से किसी भी रिहायसी क्षेत्र में नजर नहीं जाती है। लेकिन जैसे ही मंदिर की परिधि से बाहर आयेंगे आपकी नजर हिमालय के सर्म्पूण क्षेत्र तक जायेगी क्योंकि जिस जगह में मंदिर है उस जगह से आप केवल आसमान को ही देख सकते हैं। आओ ताडकेश्वर शिव धाम के दर्शन करें।

रेशमा

सुवर्णा कुलकर्णी
जयसिंहपुर, कोल्हापुर, महाराष्ट्र

आज मेरा नौकरी का पहला दिन था। तैयार होकर रेलवे स्टेशन पर समय से पहुँच गयी। प्लेटफॉर्म की भीड़ में इधर–उधर देख रही थी कि कोई पहचान वाला नजर आये। अचानक पीछे से आवाज आई मानसी मानसी ...... । पीछे मुड़ कर देखा तो अर्चना थी। मैं बहुत खुश हो गयी, कोई तो पहचान वाला मिल गया। उसने पूछा "आज पहला दिन है क्या नौकरी का? डरो मत, सामने वाले सारे गधे हैं ऐसा समझ के चलो। कोई भी परेशानी नही होगी।" मैं हंसने लगी और इतने में रेल प्लेटफॉर्म पर आ गयी। मेरा हाथ किसी ने पकड़ा और डिब्बे के अंदर खींचा। मेरी नजर उस पर पड़ी तो अचानक डर ही गयी। जिसने मेरा हाथ पकड़ा था वो हिजड़ा था। वो हंसी और बोली "डरो मत! मैं कुछ नहीं करूंगी, तुम बैठो मेरे पास।" मैं उसके पास बैठ गयी। ऐसे लोगों के पास बैठने का मेरा पहला अनुभव था। थोड़ी सी घबराहट थी। तभी उसने पूछा "नौकरी करती है क्या तू ?" "हाँ, आज ही पहला दिन है। आपका नाम क्या है?" मैने धीरे से सहमते हुए पुछा। उसने जवाब दिया "रेशमा, और मुझे आप आप मत कहो, इतनी इज्जत सुनने की आदत नही है। तुम मुझे रेशमा ही कहो।" मैं उसकी तरफ देख रही थी, उसकी आँखे, उसके बाल, उसका पहनावा, सभी एकदम ठीक ठाक था। ऐसे लग भी नहीं रहा था कि मैं एक हिजड़े के साथ बैठी हूँ। मैं भी आराम से बैठ गयी थी। उसके बाल बहुत घने और लंबे थे, उसकी आँखे बहुत खुबसूरत थी। मुझे वो बहुत प्यारी लगी। उसने गाना गाना शुरू किया, परदेसी, परदेसी जाना नहीं। उसकी आवाज में एक जादू सा था बहुत गहराई थी। उसकी आवाज ने मेरे दिल को छू लिया था। तभी अचानक पीछे से आवाज आई, रेशमा! चलो हमारा स्टेशन आ रहा है। मेरी नजर पीछे बैठे हुए सात आठ हिजड़ों पर पड़ी, उसमें से एक पास आकर मेरी तरफ देख कर बोली "कितनी प्यारी है तू" और उसने अपनी पर्स में से एक लड्डू दिया और कहा "खाओ, ये सारे हिजड़ों की तरफ से हमारी दुआयें हैं। तुम्हारे सारे दिन, सारे साल अच्छे से गुजर जाये। तुम्हारे ऊपर कोई भी परेशानी नहीं आये।" मैंने वो लड्डू ले लिया और मौसी को धन्यवाद कहा, वो हँसी तब तक उनका स्टेशन आ गया था। रेशमा उठी और जाते हुये मुझसे कहा "फिर मिलेंगे, गुडलक!"

ये शब्द सुनकर मुझे आश्चर्य सा हुआ क्योंकि गुडलक शब्द का उच्चारण बहुत स्पष्ट था। ऐसे आभास हुआ कि ये पढ़ी लिखी है। मैं उसके विचारों में डूब गयी। मेरा स्टेशन आ गया। उसके विचारों ने मुझे भुला दिया कि मेरा नौकरी का पहला दिन है। मेरे दिमाग में रेशमा के ही विचार तैर रहे थे। मेरा नौकरी का दिन अच्छा गया। शाम को लौटते हुये मैं स्टेशन पर आ गयी। मेरी आँखे रेशमा को ढूंढ रही थी, कहीं वो मिले तो उससे बात करूं, उससे पूंछू, मगर वो नहीं मिली।

अर्चना स्टेशन पर मिली तो उसने कहा तुम आज सुबह उस हिजड़े से बात कर रही थी वो मुझे अच्छा नहीं लगा। ऐसे लोगों से दूर ही रहो उनकी नीयत अच्छी नहीं होती है। लोग तुम्हे बुरी नजर से देखेंगे। मेरे समझ में यह नहीं आ रहा था कि उसने ऐसी बात क्यों कही? आखिर वो भी इंसान हैं उनके जेंडर में अगर कुछ फर्क है तो उसमें इनकी क्या गलती है, है तो इंसान ही। उनके पास भी हमारी जैसी भावनाएं होती हैं। उनका जेंडर अलग है तो क्या हुआ? क्यों समाज में उनकी अवहेलना की जाती है? उनको हमारे जैसे अधिकार क्यों नहीं मिलते हैं। ऐसा सोचते हुये मैं ट्रेन में बैठ गयी, मगर मेरे मन में हजारों प्रश्न उमड़ रहे थे। मेरी नजर

रेशमा को ढूंढ रही थी। दूसरे स्टेशन पर रेशमा को महिला डिब्बे पर चढ़ते हुये मैने देखा तो मैं बहुत खुश हो गई। मैंने उसे पुकारा "रेशमा .... यहाँ आ जा" मेरी आवाज सुनकर वो मेरे पास आकर बैठ गयी। वो थोडी नाराज दिख रही थी। मैंने पूछा "क्या हुआ?" उसने कहा "मेरी भी इच्छा पढाई और नौकरी करने की थी मगर भगवान ने मुझे ऐसा बनाया। क्या हम लोग पढ़ नही सकते, नौकरी नहीं कर सकते? तुम जैसे लोगों के साथ रह नहीं सकते ?" उसकी बातें सुनकर मैं भी सोच में पड़ गयी। मैंने पूछा "तुम ऐसे कितने दिनों से काम कर रही हो ?" उसने जवाब दिया " मैं जब 12–13 साल की थी तब मैं लड़का थी मगर जब मैं कॉलेज जा रही थी तब मुझमें थोड़ी लड़की जैसे परिवर्तन आने लगे। मेरे गाँव के लोग मेरे साथ मजाक करने लगे, मुझे चिढ़ाने लगे। मेरे जेंडर में जो परिवर्तन हो रहे थे, मैं समझ नहीं पा रही थी। मेरे साथ क्या हो रहा है? घंटो आईने के सामने खड़ी रहते थी। अपना चेहरा देखती थी, मुझमें आने वाले परिवर्तनों को देखती थी। मगर मुझे समझ में यह नहीं आ रहा था कि मेरे साथ क्या हो रहा है? मेरे मम्मी पापा दोनों काम पर जाते थे। हमारे घर की परिस्थितियाँ भी ठीक नहीं थी। लोगों के डर से मेरे माँ–बाप ने मुझे घर से निकाल दिया। तब तक मैंने कॉलेज का प्रथम वर्ष पूरा किया था। घर से बाहर निकलने के बाद लोगों ने मेरे साथ गलत व्यवहार शुरू कर दिया। मैं भाग रही थी। प्लेटफॉर्म, मंदिर ऐसी जगहों पर जा कर छुप रही थी। मैंने होटल में वेटर की नौकरी भी की मगर वहाँ लोग मेरे हाथ पकड़ते थे। गलत हरकतें करते थे तो होटल के मालिक ने मुझे गालियाँ देकर होटल के बाहर फेंक दिया। एक दिन परेशान होकर मैं रेलवे स्टेशन के प्लेटफॉर्म पर बैठी थी कि एकदम से मेरे सामने आठ–दस हिजड़े खड़े हुए थे। उसमें जिसे मैं अभी मौसी कहती हूँ मुझे बोली "रोओ मत, हमारे साथ चलो, हम तुम्हें हमारी कम्युनिटी में शामिल करते हैं।" वे लोग मुझे मुंबई लेकर आये और तभी से मैं उनके साथ रहने लगी। मौसी मेरा ख्याल माँ की तरह रखती है। हम जो ताली बजा के खाते हैं और सभी का खयाल रखते हैं इसमें कुछ गलत नहीं है। मुंबई में हम लोग ट्रेन में आते–जाते लोगों के सामने गाना गा के, ताली बजा के पैसा कमाते हैं। हम अपनी रोजी रोटी कमाते हैं तो इसमे हम क्या गलत करते हैं!

रेशमा की कहानी सुनकर मेरी आँखो में पानी आ गया। मैं घर आई तो थोड़ी उदास थी। पापा ने उदासी का कारण पूछा तो मैंने उनको रेशमा की सारी कहानी बताई और पूछा उनके लिये हम लोग कुछ कर नहीं सकते हैं ? पापा ने बताया सरकार ने ऐसे लोगों के लिए अलग सा कानून बनाया है।

इस कानून के अंतर्गत वो पढ़ भी सकते हैं, नौकरी भी कर सकते हैं और अपनी अलग से पहचान भी बना सकते हैं। उनको वोटिंग का भी अधिकार है। इसमें बहुत से बदलाव सरकार ने उनके लिये किये हैं। वह लोग भी हमारे जैसा जीवन जी सकते हैं। ये सुनकर मैं बहुत खुश हो गई। मैं इंतजार करने लगी कि कब सुबह होगी और मैं रेशमा को ये सारी बातें बता पाऊँ। सुबह जल्दी तैयार होकर स्टेशन पर जल्दी–जल्दी गयी। जैसे ही ट्रेन आयी, मैं रेशमा को ढूंढ रही थी मगर वो कहीं नजर नहीं आ रही थी। मौसी दिखायी दी। मैं तुरंत उनके पास गयी और रेशमा के बारे में पूछा। उन्होंने बताया कि आज वो काम पर नहीं आयी क्योंकि उसकी तबीयत ठीक नहीं है। मैं थोड़ी मायूस हो गयी। कुछ सोचकर मैंने मौसी को कहा कि शाम को वह मेरा इंतजार करे, मैं उनके साथ रेशमा के घर जाऊँगी। मौसी मुझे समझाने लगी कि मेरे जैसे अच्छे लोग वहां नहीं आ सकते हैं। लोग मुझे बुरा–भला कहेंगे। मगर मैं अपनी जिद पर डटी थी। मैंने कहा, मैं अवश्य आऊंगी। लोगों से मुझे कुछ लेना देना नहीं है बस आप मेरा इंतजार करना। मैं शाम को समय से आऊंगी। शाम को ऑफिस से लौटते हुये मैंने कुछ फल, थोड़ी मिठाई खरीदी और प्लेटफॉर्म पर समय से आ गयी। मौसी मेरा ही इंतजार कर रही थी। मैं, मौसी और उनके साथी चार–पाँच हिजड़े हम सब मिलकर मौसी के घर आ गये। घर पर रेशमा बुखार से तड़प रही थी। मुझसे उसकी हालत देखी नहीं जा रही थी। मैंने उसे उठाया

डॉक्टर के पास लेकर गयी। उसके लिये दवा खरीदी और उस रात उनके घर में ही रहने का फैसला किया। यह सुनकर सभी बहुत खुश हुये। सभी लोग उत्साहित थे और जोर–शोर से मेरी खातिरदारी में लग गये थे। मेरे लिए अलग–अलग पकवान बना रहे थे। रेशमा का बुखार भी उतर गया था। सारे अपनी–अपनी कहानी बता रहे थे। मौसी, मौसी कैसे बनीं, उन्होंने अपनी कहानी बतायी। उन सब की कहानी सुनकर मैं हतप्रद हो गयी। तभी रेशमा ने गाना गाना शुरू किया। लग जा गले कि फिर ये हंसी रात हो ना हो...... 2) देखा ना, हाय रे, सोचा ना....... ऐसे मजेदार गानों से सभी का दिल आनंद से भर दिया। हम सब खाना खाने बैठ गये। खाना बहुत अच्छा बनाया था। इन सब के बीच सुखद अहसास हुआ। सभी लोग आनंद से प्यार से एक दुसरे की भावनाओं की कद्र करके जी रहे थे, ना कोई झगड़ा ना कोई गिला, बस आनंद से जीवन बिता रहे थे। ये देखकर बहुत अच्छा लगा। मैंने रेशमा से कहा कि जो बात मैं तुमसे करने वाली थी, वो मैं अब कल तुमसे करूंगी। तुम पहले पूरी तरह से ठीक हो जाओ। यह कहकर मैं अपने घर चली गयी। उस दिन मैं ऑफिस न जा सकी। अगले दिन ऑफिस गयी। उस दिन रेशमा सीधा मेरे ऑफिस में आ गयी। मैंने उसे बताया कि आप जैसे लोगों के लिए सरकार ने नया कानून बनाया है और उस कानून के अनुसार तुम पढ़ भी सकती हो, नौकरी भी कर सकती हो तथा अपनी एक अलग जिंदगी जी सकती हो। यह सुनकर रेशमा बहुत खुश हुई और उसने पढ़ाई करने का निर्णय लिया मगर मौसी से बात करने का साहस न था, वो मौसी से डर रही थी। काफी सोचकर उसने मुझे मौसी से बात करने के लिए कहा। मैंने मौसी से बात की और समझाया मगर वो तैयार नहीं हुई। उसने कहा हम पढ़ लिख कर क्या करेंगे, हमारा जीवन तो ताली बजाने में, गाना सुनाने में, ऐसे ही कट जाता है। मैं भी उनको बार–बार समझाती रही, फिर थोड़ा नाराजगी के बाद उन्होंने हामी भर दी। मैं तुरन्त रेशमा और उसके सर्टिफिकेट लेकर विश्वविद्यालय गयी। वहाँ एक परिचित व्यक्ति मिले, उनको रेशमा के बारे में बताया। सारी कहानी सुनने के बाद, वो मुझे ऑफिस लेकर गये और रेशमा के विश्वविद्यालय में प्रवेश के लिये फार्म भरवाये। रेशमा का पढ़ाई करने का निर्णय उनको भी बहुत अच्छा लगा। उन्होंने अपनी तरफ से भी मदद करने के लिए कहा। लाइब्रेरी से किताबों की व्यवस्था से लेकर पढ़ाई का खर्चा सब उन्होंने उठाया। मुझसे भी जो मदद होती, मैं करती थी। रेशमा ने पढ़ाई पर विशेष ध्यान दिया। ऐसे ही दिन कटते रहे। नौकरी की व्यस्तता के कारण मैं ज्यादा वक्त नहीं दे पा रही थी पर जब भी समय मिलता, मैं रेशमा से मिलने के लिए चली जाती थी। उसकी पढ़ाई के बारे में पूछती थी। वो जी जान लगाकर पढ़ाई कर रही थी। उसके साथी भी उसका साथ दे रहे थे। एक दिन वो मुझसे मिलने के लिए मेरे ऑफिस आ गये। उसके साथ पांच–छः साथी भी थे। ऑफिस में आते ही उन्होने मिठाई बाँटना शुरू किया। सब लोग आश्चर्य से देख रहे थे, क्या हो रहा है ? वो मेरे पास आई, उसकी आँखें नम थी, उसने मुझे गले से लगाया और कहा तुम्हारे कारण ही आज मेरी डिग्री पूरी हुई है। तुम्हारा यह अहसान मरते दम तक नहीं भूलूंगी। तुम्हें लंबी उमर लगे। यह सब सुन कर मैं क्या बोलूं और क्या नहीं, इस स्थिति में थी। मेरी भी आँखे खुशी से नम हो गयी थी।

अपने जीवन में किसी के लिये कुछ कर सकी। इस बात और अहसास से मेरे अंतर्मन को शान्ति मिली। बस अब रेशमा को एक नौकरी मिल जाये, इसके लिये प्रयास करना था।

मैंने सामाजिक कार्य करने वाले लोगों से मिलना शुरु किया। जैसी आशा थी, वैसा जवाब नहीं मिल रहा था। दिन बीतते जा रहे थे मगर नौकरी नहीं मिल रही थी।

एक दिन ऐसे लोगों के लिये काम करने वाली संस्था के बारे में पता चला। मैं रेशमा को लेकर उस संस्था में गयी। उनको रेशमा से मिलवाकर उसके बारे में बताया। उन्होंने रेशमा के सारे डॉक्युमेंट्स देखे और नौकरी देने का वादा किया। रेशमा बहुत खुश हो गयी।

दिन निकल रहे थे कि एक दिन अचानक रेशमा का मेरे ऑफिस में फोन आया उसने बताया कि उसे बैंक मे नौकरी मिली है। वो बहुत ही खुश थी। मुझे उसने प्लेटफॉर्म पर मिलने के लिये बुलाया। मैं दूसरे दिन रेलवे प्लेटफॉर्म पर रेशमा से मिलने पँहुची और उसका इन्तजार करने लगी। रेशमा आयी मगर उसको देखकर मैं चकित हो गयी। वो हमेशा जैसे रहती थी आज वैसे बिल्कुल नहीं थी। एक अच्छी ड्रेस पहन कर एक सामान्य लड़की की तरह, कंधे पर पर्स, हाथ में रुमाल लेकर वो नौकरी करने जा रही थी। मुझे देखकर बोली "तुम्हारी तरह लग रही हूँ ना ?"

खुशी के कारण मैं बोल नहीं पा रही थी, मैने 'हाँ' में सिर हिलाया। रेशमा का सपना सच हुआ था। नौकरी के पहले दिन समय से जाने कि लिये उसने मुझे बाय बाय कही और ट्रेन में चढ़ गयी। मैं भी बहुत खुश थी।आज मेरे जिंदगी का सबसे अच्छा दिन था।

ऐसे शिक्षक हो मेरे

अमरजीत विद्यार्थी
भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान खड़गपुर, पश्चिम बंगाल

मृत्यु से अमरत्व की ओर,
कुपथ से सुपथ की ओर,
अंधकार से प्रकाश की ओर,
ले जाने वाले शिक्षक हो मेरे।

स्थूलता से सूक्ष्मता तक को,
सगुणों से दुर्गुणों तक को,
विद्या से अविद्या तक को,
जनाने वाले शिक्षक हो मेरे।

प्राचीनता से अर्वाचीनता तक,
आध्यात्मिकता से भौतिकता तक,
अकर्तव्यता से कर्तव्यता तक,
बताने वाले शिक्षक हो मेरे।

आलसी को पुरुषार्थी में,
स्वार्थी को परमार्थी में,
अमर को 'विद्यार्थी' में,
बदलने वाले शिक्षक हो मेरे।
ऐसे शिक्षक हो मेरे।।

भारत देश महान

संगीता चमोली
पित्थुवाला खुर्द, देहरादून, उत्तराखंड

रामाकृष्ण की पुण्य भूमि है।
यह भारत देश महान है।
बद्री केदार गंगोत्री यमुनोत्री।
यहां के पवित्र चारों धाम है।।

हरिद्वार काशी प्रयाग भी।
गंगा यमुना सरस्वती की।
बहती अविरल धारा है।
यह भारत देश महान है।

उत्तर में हिमराज हिमालय।
उदित सुशोभित भाल है।
मुकुट विराजे शान से।
यह भारत देश महान है।।

सीना ताने खड़ा हिमालय।
एक आंच देश पर न आने दें।
हमें बड़ा अभिमान है।
यह भारत देश महान है।।

प्रकृति की छटा है प्यारी।
खनिज संपदा मिलती सारी।
अन्नपूर्णा के यहां भंडार है।
यह भारत देश महान है।।

भारत मां के वीर सपूत हैं।
वीरांगना देवी समान है।
वीर सपूतों, सौ सौ प्रणाम है।
यह भारत देश महान है।।।

मंदिर मस्जिद गुरुद्वारे हैं।
सब पर शीश नवाते हैं।।
अनेकता में एकता यहां है।
यह भारत देश महान है।।।

देवों की पावन धरती है।
धरती ही स्वर्ग समान है।
यहां जन जन गतिमान हैं।
यह भारत देश महान है।।

यहां की नारी अति विदुषी है।
रानी लक्ष्मीबाई सरोजिनी नायडू।
लाखों का इतिहास में नाम है।
यह भारत देश महान है।।

यहां नारी का पूजन होता है।
नारी पूजा पुण्य देवो समान है।
धर्म–कर्म मेहनत में पुरुषो समान है।
यह भारत देश महान है।।

विकास नाम पर विस्फोट जो होते

मंजू मल्होत्रा फूल
आई.टी.बी.पी.एस.एस.ए. क्वाटर्स, चण्डीगढ़

उठ जाती भयभीत सी होकर, शोर सुनाई देता है,
अर्ध रात्रि में जब देखो पृथ्वी में कंपन होता है।

चट्टानें हिलती, पत्थर गिरते, खेत बहा ले जाते हैं,
विकास नाम पर विस्फोट जो होते, हृदय को चीर से जाते हैं।

दब जाती है ढेरों सांसें, भीषण त्रासदी होती है,
आने वाले कुछ वर्षों में, बात अतीत सी होती है।

फिर से करते वही कार्य, खतरों को अनदेखा करते हैं,
अल्पकालिक लाभ के कारण, प्राकृतिक सौंदर्य हरते हैं।

उग्र करते पर्वत को, अपने घाव कई पहुंचाते हैं,
विशाल पर्वत की सुंदर श्रृंखलाओं को, हम सब क्षति पहुंचाते हैं।

बादलों का फटना, बेचारे इंसान से सहन कहां हो पाता है,
प्रकोप प्रकृति का मानव फिर भी, क्यों समझ ना पाता है।

बेशक तबाही कभी कम तो कभी ज्यादा होती है,
अनावश्यक की छेड़छाड़ से प्राकृतिक आपदाएं होती हैं।

अंधाधुंध ये भवन निर्माण, सड़कों का जाल बिछाना है,
क्षति न पहुंचे पर्वत को अपने उत्तरदायित्व हमें निभाना है।

भूवैज्ञानिक किस लिए हैं जो राय न उनकी लेनी है,
अवैज्ञानिक सब तकनीकों की मार जगत को झेलनी है।

तपस्या का यह केंद्र हिमालय, राष्ट्रप्रहरी कहलाता है,
मानव के कर्मों से किंतु, लहूलुहान हो जाता है।

गंगा, यमुना का उद्गम स्थल क्षतिग्रस्त हो जाता है,
विकास दौड़ की आंधी में कैसे आपदाओं का समंदर बन जाता है।

कर्म सुधारे कुछ सीमित हों, हिमालय को अपने बचाना है,
महाप्रलय की दस्तक को सुनकर जीवन शैली में परिवर्तन लाना है।

संस्थान समाचार

संस्थान भारत सरकार की राजभाषा नीति का अनुपालन करते हुये राजभाषा के प्रगामी प्रयोग के लिये प्रतिबद्ध है तथा नियमित अंतराल पर राजभाषा क्रियान्वयन के प्रगति विवरण राजभाषा विभाग, विज्ञान एवं प्रोद्योगिकी मंत्रालय को भेज रहा है ।

स्वतंत्रता दिवस 2021

इस वर्ष भी स्वतंत्रता दिवस कोविड़ उपयुक्त व्यवहार व दिशा निर्देशों का पालन करते हुये हर्षोल्लास के साथ मनाया गया। संस्थान के निदेशक डा. कालाचांद सांई ने ध्वजारोहण कर अपने वक्तव्य में स्वतंत्रता के महत्व पर प्रकाश डालते हुयें स्वतंत्रता आंदोलन में शामिल हर आंदोलनकारी को श्रृद्धा सुमन अर्पित किये। उन्होने जोर दिया कि हमें अपनी स्वतंत्रता का सम्मान करना चाहिये व राष्ट्रीय विकास में सतत योगदान देना चाहिये।

गणतंत्र दिवस समारोह 2022

हर वर्ष की भांति इस वर्ष भी गणतंत्र दिवस समारोह हर्षोल्लास के साथ मनाया गया। गणतंत्र दिवस समारोह का आयोजन, भारत सरकार के दिशा निर्देशों का अनुपालन करते हुये कोविड़ उपयुक्त व्यवहार के साथ किया गया। डा. कालाचांद सांई, निदेशक महोदय द्वारा ध्वजारोहण किया गया। उन्होने अपने अपने वक्तव्य में राष्ट्रीय विकास हेतु अपनी अपनी जिम्मेदारी का ईमानदारी से निर्वहन करने पर जोर दिया।

हिन्दी पखवाड़ा 2021

कार्यालय के दैनिक कार्यों में हिन्दी भाषा के अधिकाधिक प्रयोग को बढ़ाने के लिये दि. 14 सितम्बर से 28 सितम्बर 2021 तक हिन्दी पखवाडा मनाया गया। पखवाड़ा कार्यक्रम का शुभारम्भ प्रोफेसर सुलेखा डंगवाल, दून विश्वविद्यालाय के करकमलों द्वारा द्वीप प्रज्जवल्लित कर किया गया। अपने उद्बबोधन में उन्होने भारत की सांस्कृतिक विरासत तथा शिक्षा पद्वति पर प्रकाश डाला।

पखवाड़ा कार्यक्रम में आमंत्रित व्याख्यान में प्रसिद्ध कहानीकार श्री विजय सिंह 'पथिक' का व्याख्यान मुख्य आकर्षण का केन्द्र रहा । संस्थान से भी वैज्ञानिकों ने विभिन्न विज्ञान विषयों पर अपने–अपने व्याख्यान प्रस्तुत किये। इसके अतिरिक्त संस्थान में निबन्ध लेखन, फोटोग्राफी प्रतियोगिता, प्रश्नोत्तरी इत्यादि प्रतियोगिताएं आयोजित की गयी।

हिन्दी पखवाडा समापन समारोह में श्री सुनील उनियाल गामा, मेयर, देहरादून ने मुख्य अतिथि के रुप में प्रतिभाग किया। अपने उद्बबोधन में उन्होनें मानव समाज के विकास मे मातृभाषा की भूमिका के विषय पर चर्चा की। हिन्दी पखवाडा समारोह का समापन मुख्य अतिथि द्वारा विभिन्न प्रतियोगिताओं के विजेताओं को पुरुस्कार वितरण कर किया गया।

स्वतंत्रता दिवस–2021

गणतंत्र दिवस–2022

हिन्दी पखवाड़ा 2021

WADIA INSTITUTE OF HIMALAYAN GEOLOGY, DEHRADUN

Latest Publications

2018

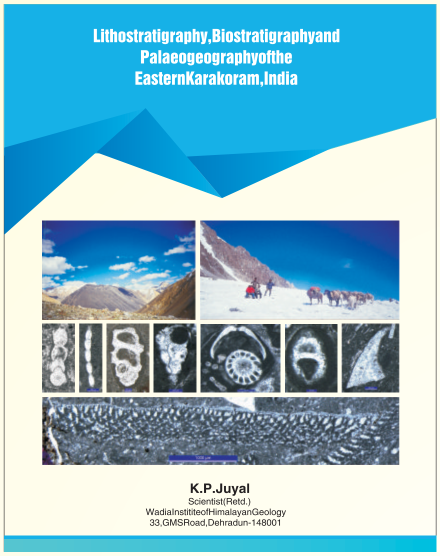

Rs.600/- (India), US$ 50/- (Abroad)

2015

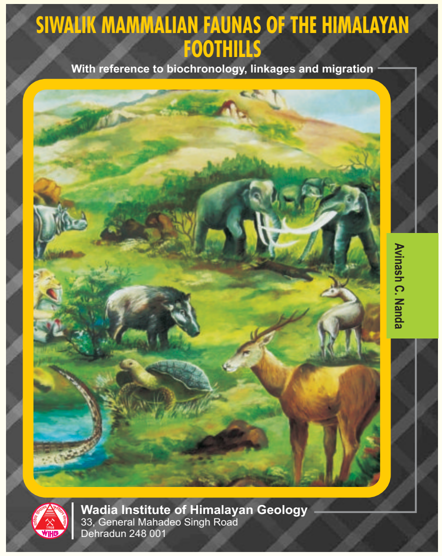

Rs.1200/- (India), US$ 100/- (Abroad)

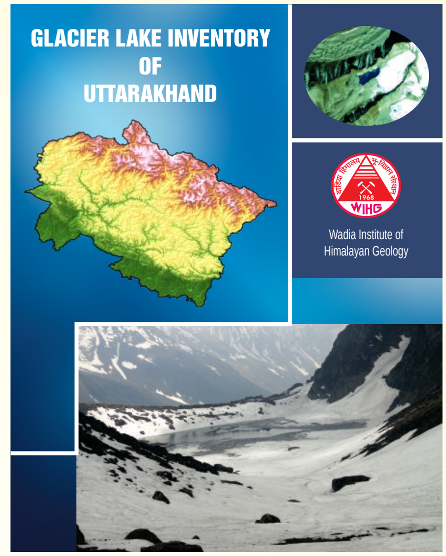

Price: Rs. 500/- (India), US$ 50/- (Abroad)

Previous Publications

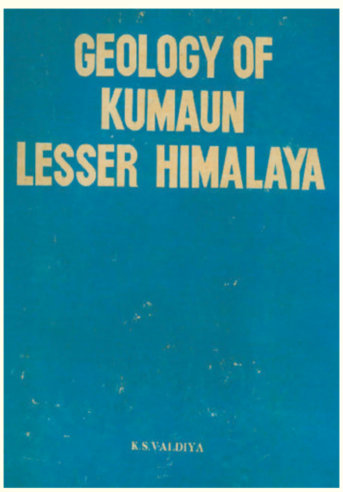

Rs.180/- (India), US$ 50/- (Abroad)

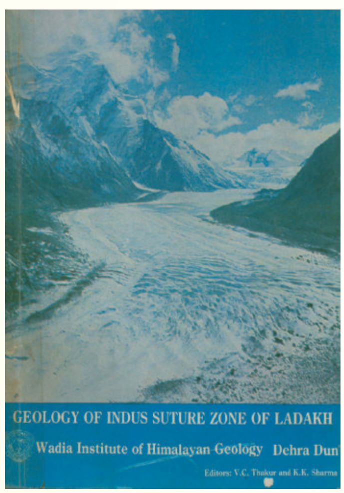

Rs.205/- (India), US$ 40/- (Abroad)

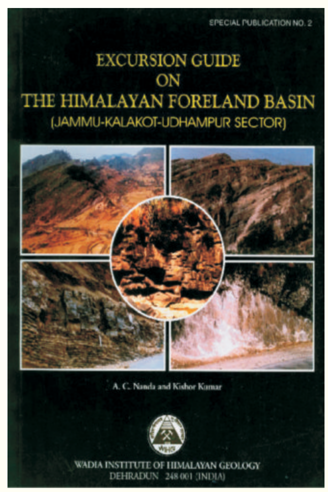

Rs.180/- (India), US$ 15/- (Abroad)

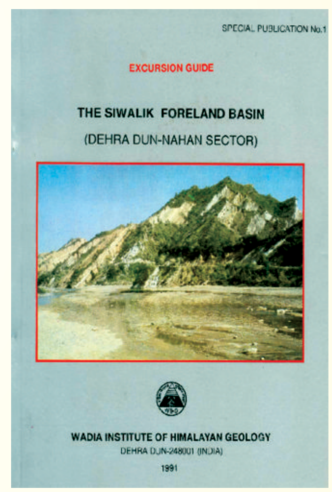

Rs.45/- (India), US$ 8/- (Abroad)

Rs.200/- (India), US$ 15/- (Abroad)

Procurement details:
Corresponding address:
The Director
Wadia Institute of Himalayan Geology,
33, GMS Road, Dehradun 248001, India
or
Publication Section
Wadia Institute of Himalayan Geology,
33, GMS Road, Dehradun 248001, India
Phone: +91-0135-2525430, Fax: 0135-2625212
Email: himgeol@wihg.res.in,
Web: http://www.himgeology.com

Cheque/Bank Draft:
Should be in favour of the
'Director, WIHG, Dehradun, India'

WADIA INSTITUTE OF HIMALAYAN GEOLOGY, DEHRA DUN
PUBLICATIONS AVAILABLE FOR SALE

HIMALAYAN GEOLOGY

(These volumes are the Proceedings of the Annual Seminars on Himalayan Geology organizsed by the Institute)

		(in Rs)	(in US $)
Volume 1	(1971)	130.00	26.00
Volume 2*	(1972)	50.00	
Volume 3*	(1973)	70.00	
Volume 4*	(1974)	115.00	50.00
Volume 5	(1975)	90.00	50.00
Volume 6	(1976)	110.00	50.00
Volume 7	(1977)	110.00	50.00
Volume 8(1)	(1978)	180.00	50.00
Volume 8(2)	(1978)	150.00	45.00
Volume 9(1)	(1979)	125.00	35.00
Volume 9(2)	(1979)	140.00	45.00
Volume 10	(1980)	160.00	35.00
Volume 11	(1981)	300.00	60.00
Volume 12	(1982)	235.00	47.00
Volume 13*	(1989)	1000.00	100.00
Volume 14* (in Hindi)	(1993)	600.00	-
Volume 15*	(1994)	750.00	

(Available from M/s Oxford & IBH Publishing Co. Pvt. Ltd., New Delhi, Bombay, Kolkata)

Volume 16*	(1999)	1000.00	100.00

Journal of Himalayan Geology

(A bi-annual Journal : published from 1990 to 1995)

Annual Subscription	(in Rs)	(in US $)
Institutional	500.00	50.00
Individual	100.00	25.00

Volume 1 (1990) to Volume 6 (1995)*

HIMALAYAN GEOLOGY

(A bi-annual Journal incorporating Journal of Himalayan Geology)

Annual Subscription:	(in Rs)	(in US $)
Institutional	500.00	50.00
Individual	100.00	25.00

Volume 17 (1996)*

HIMALAYAN GEOLOGY

Revised Annual Subscription (w.e.f. 1997):	(in Rs)	(in US$)
Institutional	750.00	50.00
Individual (incl. postage)	100.00	25.00

Volume 18 (1997) to Volume 26 (2005)*
Volume 27 (2006) to Volume 30 (2009)
Volume 31 (2010) to Volume 32 (2011)*
Volume 33 (2012)
Volume 34 (2013) to Volume 36 (2016)*
Volume 37 (2015) to Volume 38 (2017)
Volume 39 (2018)

Revised Annual Subscription (w.e.f. 2018):	(in Rs)	(in US$)
Institutional	2000.00	150.00
Individual (incl. postage)	600.00	50.00
Individual (excl. postage)	500.00	

Volume 40 (2019) to Volume 43 (2022)

OTHER PUBLICATIONS

Geology of Kumaun Lesser Himalaya, 1980 (by K.S. Valdiya)	Rs. 180.00 US $ 50.00
Geology of Indus Suture Zone of Ladakh, 1983 (by V.C.Thakur & K.K. Sharma)	Rs. 205.00 US $ 40.00
Bibliography on Himalayan Geology, 1975-85	Rs. 100.00 US $ 30.00
Geological Map of Western Himalaya, 1992 (by V.C. Thakur & B.S. Rawat)	Rs. 200.00 US $ 15.00
Excursion Guide :The Siwalik Foreland Basin (Dehra Dun-Nahan Sector), (WIHG Spl. Publ. 1,1991) (by Rohtash Kumar and Others)	Rs. 45.00 US $ 8.00
Excursion Guide : The Himalayan Foreland Basin (Jammu -Kalakot-Udhampur Sector) (WIHG Spl Publ. 2, 1999) (by A.C. Nanda & Kishor Kumar)	Rs. 180.00 US $ 15.00
Glacier Lake Inventory of Uttarakhand (by Rakesh Bhambri et al. 2015)	Rs. 500.00 US $ 50.00
Siwalik Mammalian Faunas of the Himalayan Foothills With reference to biochronology, linkages and migration (by Avinash C. Nanda, 2015)	Rs. 1200.00 US $ 100.00
Lithostratigraphy, Biostratigraphy and Palaeogeography of the Eastern Karakoram, India (by K.P. Juyal, 2018)	Rs. 600.00 US $ 50.00

Note: 'Journal of Himalayan Geology' & 'Himalayan Geology' have been merged and are being published as Himalayan Geology' after 1996.
*** Out of Stock**

Life Time Subscription of Himalayan Geology
(Individuals only) India: 3000/- abroad: US$ 300

Trade Discount (In India only)
1-10 copies: 10%, 11-15 copies: 15% and >15 copies: 20%

Offer (for a limited period): A free set of old print volumes (1971 to 2012, subject to availability) of 'Himalayan Geology' will be provided to the new registered Life Time Subscribers (Postage to be borne by the subscriber).

Publications: *may be purchased from Publication & Documentation Section and Draft/Cheque may be drawn in the name of The Director, Wadia Institute of Himalayan Geology, 33- General Mahadeo Singh Road, Dehra Dun – 248 001*

Phone: 0135-2525430 Fax: (91) 0135-625212 Website: http://www.himgeology.com E-mail: himgeol@wihg.res.in